ओ३म्

पाक्षिक
परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५६ अंक - २१ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र नवम्बर (प्रथम) २०१४

ऋषि मेला

आप सभी का हार्दिक अभिनन्दन है ...

योग-साधना शिविर-व्यायाम करते हुए योग साधक

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५६ अंक : २१
दयानन्दाब्द: १९०
विक्रम संवत्: कार्तिक शुक्ल, २०७१
कलि संवत्: ५११५
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११५

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

नवम्बर प्रथम २०१४

अनुक्रम

१. ऋषि दयानन्द आज	सम्पादकीय	०४
२. तरति शोकमात्मवित्	स्वामी विष्वङ्	०७
३. जिज्ञासा समाधान-७४	आचार्य सोमदेव	११
४. 'दर्शन' का दर्शन करें	मुमुक्षु मुनि	१३
५. मनुस्मृति और उसका यथायोग्य.....	कन्हैयालाल आर्य	१९
६. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		२३
७. बौद्ध-जैन मत विवेचन	पं. अमरसिंह	२५
८. १३१ वाँ ऋषि बलिदान समारोह कार्यक्रम		२९
९. संस्था-समाचार		३१
१०. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	३६
११. पुस्तक-समीक्षा	देवमुनि	४०
१२. नियम:	सुरेशचन्द्र शास्त्री	४१
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
- **उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं** -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

ऋषि दयानन्द आज

ऋषि दयानन्द का होना इस देश के इतिहास की अद्‌भुत घटना है। इतिहास में स्मरण उसी को रखा जाता है जो सामान्य से भिन्न है। ऐसी घटनायें बहुत होती हैं तथा उनमें तुलना करना कठिन होता है। तुलना करने का एक ही आधार हो सकता है, किस व्यक्ति के विचार और कार्य कितने महत्त्वपूर्ण और कितने समय तक प्रभावकारी हैं। महापुरुषों ने जो भी कार्य किया अपने समय में अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपनी समस्याओं के समाधान का यत्न किया। इन लोगों के कार्य की सीमा और कार्य दृष्टि उनके समाज और वर्ग तक रही, उनके विचार भी तत्कालीन परिस्थिति में एक देश की सीमा तक बन्धे रहे हैं।

आज के संसार के इतिहास में सबसे अधिक प्रभावित करने वाले महापुरुषों में महात्मा ईसा, हजरत मुहम्मद, भगवान बुद्ध और भगवान महावीर हैं, आगे यह परम्परा लम्बी हो सकती है परन्तु विचार की अपेक्षा से कम भिन्नता है। ईसा का धर्म बढ़ा तो बहुत परन्तु उसके अन्दर दूसरे के विचार को बलात् परिवर्तन की परम्परा बहुत पुरानी है। ईसाइयत के प्रचार-प्रसार के लिए किये गये प्रयत्नों में प्रलोभन और हिंसा का आश्रय लेने में कभी संकोच नहीं किया गया। आज भी सभ्यता के युग में अपने को सभ्यता का संरक्षक मानने वाला चर्च तभी तक सभ्य दीखना चाहता है जब तक उस क्षेत्र में निर्बल है, जैसे ही समाज संख्या बल बढ़ा लेता है तब दूसरे विचारों का अस्तित्व समाप्त करने में कोई कमी नहीं करता। विचारों को मनवाने में हजरत मुहम्मद का कोई मुकाबला नहीं। आज इस्लाम के मानने वालों की संख्या और प्रभाव क्षेत्र संसार में बहुत व्यापक है। इस विचारधारा का जन्म ही असहिष्णुता के बीज से हुआ है। हजरत मुहम्मद ने शिष्यों को उपदेश दिया परन्तु अपने विचारों पर प्रश्न करने का अधिकार किसी को नहीं दिया। जो कहा और जो किया बस वही अन्तिम है। वह अपने समाज का राजा, सेनापति, न्यायाधीश तीनों है। आज भी इस्लाम के अनुयायी अपने को श्रेष्ठ इसलिए मानते हैं कि उनके पास तुलना करने के लिए कुछ भी नहीं है, वे किसी अन्य विचार की सत्ता ही स्वीकार नहीं करना चाहते, तुलना का प्रश्न ही कहाँ उत्पन्न होता है। इस्लाम के संस्थापक में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जिसको और लोग धर्म की आड़ लेकर करते हैं मोहम्मद ने उसे ही धर्म घोषित कर दिया। दुनिया में हिंसा को अधर्म माना जाता है परन्तु धर्म के नाम पर हिंसा की जाती है, मोहम्मद ने हिंसा को ही धर्म घोषित कर दिया, वह चाहे प्राणियों की बलि देना हो या काफिर कहकर किसी व्यक्ति का कत्ल करना हो। इस तरह मन की हिंसक प्रवृत्ति को धर्म के नाम पर खुली छूट है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है कि संसार के सभी मत प्रवर्तक इन्द्रियों के संयम की बात करते हैं, संयम करने के उपायों को साधना में सम्मिलित करते हैं परन्तु मोहम्मद साहब ने अधिक विवाह करने और असीमित सन्तान उत्पन्न करने की छूट ही नहीं दी अपितु उनके आदेशों का पालन करने वालों को जन्नत में हूरों की कल्पनायें कर संसार के सुखों की वहाँ पूर्ति का प्रलोभन भी दे दिया। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य अपने विचारों का नियन्त्रण व संयम करने की बात ही कैसे सोच सकता है। मोहम्मद की तीसरी विशेषता है, जहाँ दूसरे लोग उपासना द्वारा संसार से विरक्त होने और मोक्ष की बात करते हैं, इसलिये उपासना व्यक्तिगत रूप से एकान्त में करने की प्रेरणा देते हैं, वहाँ उपासना इस्लाम की सेना की छावनी है। नमाज से आत्मिक उन्नति तो नहीं होती परन्तु इस्लाम की सामाजिक संरचना को बल अवश्य मिलता है। यही कारण है नमाज के नाम पर युद्धोन्माद की प्रवृत्ति देखी जाती है। जैसे सैनिक को अपनी बुद्धि से काम करने का अवसर और अधिकार नहीं होता, वैसे ही इस्लाम के अनुयायी को सोचने का अधिकार नहीं है। मोहम्मद ने ईश्वर उपासना की बात की है परन्तु मोहम्मद के बिना ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं, मोहम्मद की अनुमति ही ईश्वर का आदेश है। इसलिए मुसलमान उपासना में ईश्वर के साथ मोहम्मद को याद करता है और खुदा के सब जगह हाजिर-नाजिर मानने पर भी काबा की ओर मुख करना ईश्वर की उपासना समझता है क्योंकि काबा मोहम्मद का जन्म स्थान है। आज संसार में इस्लाम प्रचार तलवार के बल पर ही अधिक हुआ है।

धर्म का सम्बन्ध विचारों से है। विचारों का प्रचार करके अपने अनुयायियों को सहमत करने की परम्परा भारत में ही अधिक स्वीकार्य है। पुराने समय में भगवान महावीर और भगवान बुद्ध ने अहिंसा, दया, संयम आदि

के प्रचार से मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों को जगाने का प्रयास किया। भारत के बाहर मोहम्मद धार्मिक होकर राजा बनने में विश्वास रखते हैं, वहाँ महावीर और बुद्ध राजा होकर भी फकीर होने में विश्वास करते हैं, यही मौलिक अन्तर है। आगे चलकर इनके अनुयायियों ने भी राज सत्ता को प्राप्त करके, अन्य धर्मों की भाँति बल प्रयोग से अपने विचारों को फैलाने का प्रयास किया। मौलिक रूप से संस्थापकों का विश्वास विचारों के प्रसार में रहा है, उपदेश से हृदय परिवर्तन कराने का ही पूरे जीवन उन्होंने प्रयास किया।

इस देश में जैन और बौद्ध विचारधारा का बहुत प्रचार और विस्तार होने पर भी यहाँ का मौलिक विचार नहीं बना। इसका कारण, इस देश की परम्पराओं और विचारों के विरोध स्वरूप इन विचारों का जन्म हुआ। इस देश की धार्मिक परम्परा आस्तिकता में विश्वास करती है। किसी सत्ता के होने में उसका विश्वास है जिसका माध्यम है- वेद और ईश्वर। जो वेद को और उसके देने वाले ईश्वर को मानता है, वह आस्तिक है और जो इनमें से किसी एक की या दोनों की सत्ता से इन्कार करता है उसे नास्तिक कहा गया है। किन्तु इनका मौलिक विचार नहीं है यह प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न विचार है। इस्लाम और ईसाइयत के इस देश में आने से पहले यह वैचारिक संघर्ष इस देश में प्रारम्भ हो गया था। सत्ता के द्वारा किसी विचार के पोषण होने पर भी सामान्य जनता में इनकी स्वीकार्यता और अस्वीकार्यता प्रचार पर ही आधारित थी। सत्ता के कारण एक समय ऐसा आया जब इस देश से परम्परागत धर्म की मान्यता क्षीण प्राय हो गई। उस समय सत्ता के मुकाबले सन्तों ने संघर्ष किया। जहाँ युद्ध और शस्त्र से जय-पराजय होती थी वहाँ आचार्य शंकर ने शास्त्रार्थों से जय-पराजय का निश्चय कराया, उनके प्रचार का इतना प्रभाव हुआ कि इस देश में बौद्ध और जैन मतों का पराभव हुआ और ब्राह्मण धर्म की फिर से स्थापना हुई। जब ब्राह्मण धर्म की आचार्य शंकर ने फिर से स्थापना कर दी और लम्बे समय तक उसका वर्चस्व बना रहा फिर भी इस देश में विचारधारा के पतन के साथ राज सत्ता का भी पतन होने लगा तब इस समाज में जो ब्राह्मण धर्म, जैन और बौद्धों को पराजित कर अपना वर्चस्व स्थापित कर चुका था वही धर्म इसी देश में ईसाइयत और इस्लाम के आने से पराजित होने लगा, वेदानुयायियों में आत्महीनता घर करने लगी, दिन प्रतिदिन इनके वर्चस्व के साथ इनकी संख्या भी घटने लगी। विदेशी सत्ता में, मुसलमानों ने इस्लाम का और अंग्रेजों ने इस देश में ईसाइयत का प्रचार किया। तब इस देश के समाज में जो संकट खड़ा हुआ वह केवल राजनैतिक पराधीनता का नहीं था अपितु धार्मिक दासता का भी था। जो लोग मुसलमान हो गये थे वे इस्लामी शासक को विदेशी होने पर भी अपना मानते थे, अपने साथ रहने वाली इस्लामेतर प्रजा को विधर्मी व काफिर कहकर अपना शत्रु समझते थे। यही स्थिति ईसाई लोगों की थी, वे ईसाई बनकर अपने को अंग्रेजों का छोटा भाई कहते थे तो हिन्दुओं के प्रति उनके मन में घृणा और परायापन बढ़ रहा था। ऐसी परिस्थिति में इस देश को धार्मिक और राजनीतिक दोनों ही सत्ताओं ने पराया बना दिया था। अज्ञानग्रस्त जनता और स्वार्थ और पाखण्ड में लिप्त धर्माचार्य न तो इस देश के धर्म को बचाने में समर्थ थे न विदेशी सत्ता का प्रतिकार करने का विचार ही उनके मन में था।

देश और समाज किंकर्त्तव्यविमूढ़ बना हुआ नियति समझकर इस दासता की परिस्थितियों को स्वीकार कर बैठा था, ऐसे समय पर ऋषि दयानन्द का इस देश की धरा पर अवतरण हुआ। ऋषि दयानन्द को कार्यक्षेत्र में उतरते ही यह समझने में देर नहीं लगी कि इस देश के पतन का कारण क्या है? देश के आन्तरिक और बाह्य शत्रु कौन हैं? भारत की पराधीनता के समय में जितने भी समाज सुधारक, विचारक, धार्मिक नेता, साधु-सन्त हुए हैं, उनमें ऋषि दयानन्द की विलक्षणता इस बात में है कि इस देश की राजनैतिक और धार्मिक दासता से समान रूप से इस देश की जनता को मुक्त कराना। इसके लिए उन्होंने जो मार्ग चुना वह न तो शंकराचार्य का ब्राह्मण धर्म था, न बौद्ध और जैन का ब्राह्मण विरोधी नास्तिकवाद, न ही विदेशी राजसत्ता से पालित पोषित ईसाइयत या इस्लाम ही उनके आदर्श थे। सबसे पहले उन्होंने इस देश की आधारभूत विचारधारा के जनक वेद, शास्त्र एवं वैदिक साहित्य का स्वयं गहरा अध्ययन किया और ब्राह्मणवाद के रूप में झूठ, पाखण्ड, जो स्वार्थ की पूर्त्ति के लिये ब्राह्मणों ने वेद पर थोपा था उससे ऋषि दयानन्द ने वेदों को मुक्त कराया, वेदों के वास्तविक अर्थ और प्रयोजन को जनता और धर्माचार्यों, विद्वानों के सामने रखा। ब्राह्मणों द्वारा वेद पढ़ने पर लगाये गये प्रतिबन्ध को ऋषि दयानन्द ने वेदों को मानव मात्र के लिए ग्राह्य और स्वीकार्य बना दिया। इस तरह इस देश की आत्मा का प्रकाश ऋषि दयानन्द ने किया। इस देश में ऋषि दयानन्द के आसपास जितने वेद-समर्थक या वेद-

विरोधी थे उनका दुर्भाग्य यह था कि वे स्वयं वेद पढ़ने के स्थान पर दूसरे के तर्कों, विचारों को आधार बनाकर वेद का समर्थन या विरोध करते थे परन्तु ऋषि दयानन्द ने स्वयं वेदों का अध्ययन कर वेद समर्थकों के और विरोधियों के उन विचारों का तर्क और वेद के प्रमाणों से विरोध कर के वेद की सत्यता को प्रतिष्ठित किया। यही उनका विचार इस देश की सभ्यता संस्कृति को बचाने का और देश के गौरवपूर्ण इतिहास को प्रकाशित करने का आधार बना।

जब एक बार वेद के यथार्थ सत्य विचार ऋषि दयानन्द को प्राप्त हो गये, तब उन्हें न पाखण्डी, स्वार्थी वेद समर्थकों से शास्त्रार्थ करने में कठिनाई हुई, न वेद विरोधी जैन, बौद्ध, ईसाइयत और इस्लाम की गलत परम्पराओं, मान्यताओं, सिद्धान्तों पर आक्रमण करने में संकोच ही हुआ। ऋषि दयानन्द को किसी राजसत्ता से कभी भय नहीं लगा। उन्होंने सदा सत्य को स्वीकार किया और सत्य के ग्रहण करने के लिए सबको प्रेरित किया। वेद और ईश्वर दोनों के सत्य, वास्तविक स्वरूप को प्रकाशित करने में जीवनभर प्रयत्नशील रहे। माता-पिता के समान सुख देने वाली विदेशी सत्ता की तुलना में कम अच्छे स्वराज्य को सर्वोपरि बताया। धार्मिक अन्धविश्वास और पाखण्ड का वह चाहे अपनों का हो या दूसरों का उसके खण्डन करने में तनिक भी देर नहीं लगाई। ऋषि दयानन्द को सभी साधकों, सन्तों, विचारकों से पृथक् करने वाली बात है, वे मनुष्य मात्र को ज्ञान, शिक्षा, सत्कर्मों का अधिकार देते हैं। इतना ही नहीं वे अपने अनुयायियों को कुछ भी बिना परीक्षा किये स्वीकार न करने का आदेश देते हैं। यह वह अधिकार है जो अधिकार कोई गुरु अपने शिष्यों को देने के लिए तैयार नहीं होता। ऋषि दयानन्द की इस वैचारिक क्रान्ति का दिग्दर्शन हमें उनकी अमरकृति सत्यार्थप्रकाश में होता है। अब तक धार्मिकता के नाम पर सबका आदर करने, सबके साथ समभाव रखने का पाठ पढ़ाया जाता था परन्तु ऋषि ने सभी मत-पन्थों का अध्ययन किया और उनके मिथ्या आडम्बर और गलत सिद्धान्तों की बखिया उधेड़ कर रख दी। विदेशी धर्मों की सिद्धान्त विरुद्ध बातों और पाखण्डों का भी उसी प्रकार निराकरण किया। परिणामस्वरूप आजतक भी वह तिलमिलाहट समाप्त नहीं हुई। आज भी ऋषि के सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए भारतीयों को नये मत-सम्प्रदायों का भी अध्ययन कर उनका खण्डन करने की उतनी ही आवश्यकता आज है जितनी ऋषि दयानन्द के समय थी। इस्लाम और ईसाइयत का जिस तरह से आक्रमण हो रहा है, उनके षड़यन्त्रों का अध्ययन कर एक बार फिर सत्यार्थप्रकाश के तेरहवें और चौदहवें समुल्लास को लिखने और पढ़ने की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के रूप में एक शैली प्रदान की है जो वेदों के यथार्थ स्वरूप को प्रकाशित करने के लिए प्रेरित करती है और अन्तिम चार समुल्लासों के रूप में दुनिया के हर पाखण्ड का विरोध करने का बल प्रदान करती है। जितने प्रासंगिक ऋषि दयानन्द तब थे उतने ही प्रासंगिक आज भी हैं। लोकनाथ तर्क वाचस्पति के शब्दों में-

या कांक्षर्षिवरेण चेतसि कृता किन्तु स्वार्थ विवर्जिताः सुनिपुणाः।
खड्गाश्व विकलं प्रताड्य कशया सर्वैषा करुणा विवेकजलधेः।।

हे नाथ सो दूर है, जो लोक संघी डटे।।
दौडाय लेंगे कभी, स्वामी दयानन्द की।।

-धर्मवीर

मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर में ही मन बुद्धि को युक्त कर विद्वानों के सङ्ग से विद्या को पा सुखी हो अन्य मनुष्यों को भी इसी प्रकार आनन्दित करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.१४

जैसे विद्वान् लोग ईश्वर की सृष्टि में विद्या से पदार्थों की परीक्षा करके कार्य्यों में उपयोग कर सुखों को प्राप्त करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को इस यज्ञ का अनुष्ठान कर सब सुखों को पहुँचाना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२२

मनुष्यों को ईश्वर की इस सृष्टि में विद्वानों का अनुकरण सदा करना और मूर्खों का अनुकरण कभी न करना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२३

हे विद्वान् मनुष्य! जैसे सूर्य अपने प्रकाश से चोर, व्याघ्र आदि प्राणियों को भय दिखा कर अन्य प्राणियों को सुखी करता है वैसे ही तू भी सब शत्रुओं को निवारण कर प्रजा को सुखी कर।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२४

मनुष्यों को परमेश्वर की उपासनायुक्त व्यवहार से शरीर और आत्मा के बल को पूर्ण कर के यज्ञ से प्रजा की पालना और शत्रुओं को जीतकर सब भूमि के राज्य की पालना करनी चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२५

आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण.....

तरति शोकमात्मवित्

- स्वामी विष्वङ्

प्रत्येक मनुष्य शोक से, सन्ताप से, क्लेशों से, दूर होना चाहता है परन्तु ऐसा नहीं हो पाता है। इसके पीछे बहुत बड़ा कारण रहता है, उस कारण को प्रायः मनुष्य नहीं जान पाता है। मनुष्य को जो दुःख प्राप्त होता है या दुःखी रहता है, उसके पीछे एक बहुत बड़ा कारण जानकारी का अभाव है। जानकारी न होने के कारण बहुत से लोग अलग-अलग प्रकार के कष्ट उठाते हैं। अशिक्षा (अविद्या) दुःख का मुख्य कारण है। जो लोग शिक्षित हैं, वे शिक्षित होते हुए भी दुःखी होते हुए दिखाई देते हैं। यहाँ पर शिक्षा (विद्या) के विषय में विचार करके देखना चाहिए कि विद्या क्यों पढ़ी जाती है? यदि मनुष्य विद्या-अर्जन नहीं करता है, तो क्या उसे कोई अन्तर आयेगा? हाँ, यदि विद्या-अर्जन नहीं करता है, तो मनुष्य सुखी नहीं हो पायेगा। इसलिए विद्या सुख का कारण है इसके विपरीत अविद्या (विद्या का न होना अथवा विपरीत ज्ञान का होना) दुःख का कारण है। जो व्यक्ति विद्या-अर्जन करके भी दुःखी रहता है, तो वह विद्या का लाभ लेना नहीं जानता। इसलिए विद्या पढ़ कर भी न पढ़े हुए व्यक्ति के समान अनपढ़ जैसा बना रहता है। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह विद्या पढ़ कर उसका लाभ अवश्य लेवें अन्यथा पढ़ा-लिखा होकर भी अनपढ़ बना रहेगा। कोई भी व्यक्ति पढ़ा हुआ होकर भी अपने-आपको अनपढ़ कहलवाना नहीं चाहता है। कोई भी व्यक्ति पठित होने मात्र से सुखी नहीं होता है बल्कि पठित व्यक्ति पढ़े हुए को व्यवहर में उतारता है, तो सुखी होता है, नहीं तो सुखी नहीं हो पायेगा। इसलिए पढ़ने का अर्थ केवल शब्दों को जानना नहीं है।

संसार में शब्दों को जानने वालों की संख्या अधिक है। वे शब्द के शब्द जानते हैं परन्तु उन शब्दों के अर्थों को नहीं जान पाते हैं। अर्थों को जानने का अभिप्राय है जैसा शब्द का अर्थ है वैसा उस अर्थ को व्यवहार में लाना। यदि ऐसा नहीं किया जाता है, तो शब्दों के अर्थों को जानने का कोई औचित्य नहीं रह जाता। इसलिए विद्या पढ़ने के प्रयोजन को पूर्ण करना मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि '**हम शब्दों के साथ अर्थों को भी जानते हैं।**' फिर वे अर्थों के अनुरूप क्यों नहीं करते? उदाहरण के लिए बीड़ी-सिगरेट नहीं पीना चाहिए, मद्यपान का सेवन नहीं करना चाहिए, व्यायाम करना चाहिए, देर रात तक जगना नहीं चाहिए, प्रातः शीघ्र जगना चाहिए इत्यादि अनेक उदाहरण हैं। यहाँ पर कहते हैं कि 'हम जानते हैं' क्या जानते हैं? सिगरेट पीने से हानि होती है। फिर क्यों पीते हैं? नहीं पीना चाहिए, फिर भी पीते हैं। उनके मन के किसी कोने में यह रहता है कि सिगरेट पीने से हानि होती है परन्तु सब को हानि नहीं होती है। जिन को हानि नहीं होती है, उस सूचि में वे अपने-आपको रखते हैं अथवा उपचार आदि के माध्यम से ठीक होने की सुनिश्चितता को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार के अनेकों कारणों को विकल्प के रूप में रखते हैं। इसलिए हानि से बच-निकलने का अवसर अपने पास सुरक्षित रखते हैं। यह बात स्वीकार्य तो है कि वे बच-निकल सकते हैं परन्तु हानि न हो यह नहीं हो सकता है। हाँ, हानि कम-ज्यादा अवश्य हो सकती है परन्तु अनुचित करने पर हानि ही न हो ऐसा नहीं हो सकता। इस बात को न जानने के कारण मनुष्य अनिष्ट (न करने योग्य कार्यों को) करने लगते हैं। ऐसा कर-करके जीवन में दुःखी ही रहते हैं, ऐसे लोग कभी पूर्ण सुखी नहीं हो सकते। इसलिए विद्या के प्रयोजन को पूरा करने के लिए जाने हुए अर्थों को व्यवहार में उतारना ही होगा, अन्यथा दुःख सागर से पार नहीं हो पायेंगे।

यूँ तो संसार में पठित वर्ग बहुत हैं परन्तु वे अपने-आपको जानकार मानते हुए भी अधिक दुःखी रहते हैं। उनका दुःख बाह्य साधनों की कमी के कारण नहीं है। फिर किस कारण से? उनका सर्वाधिक दुःख मानसिक होता है। उनके दुःख के पीछे मुख्य कारण यह है कि वे जितना अधिक जानकारी (शब्दों के रूप में) रखते हैं। उस जानकारी का प्रयोग व्यवहार में नहीं कर पाते हैं, इसलिए वे दुःखी (शोक ग्रस्त) होते हैं। आज के युग में जो जितना अधिक जानकारी (शब्दों में) रखता है वह उतना अधिक मानसिक रूप में दुःखी रहता है। इस सन्दर्भ में एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण है कि एक बार महर्षि सनतकुमार के पास नारदमुनि पहुँच गये और कहने लगा हे ऋषिवर! मैं आप से विद्या पढ़ने आया हूँ आप कृपा करके मुझे विद्या पढ़ायें। ऋषि ने नारदमुनि से पूछा अब

तक आपने क्या-क्या पढ़ा है? तो मुनि ने कहा-

ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं....
सर्पदेवजनविद्यामेतद् भगवोऽध्येमि।।

(छान्दोग्य ७.१.२)

अर्थात् हे ऋषिवर! मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास-पुराण, शुश्रुषा-विज्ञान, गणित, उत्पात-विज्ञान, अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र आदि जितनी भी विद्याएँ हो सकती हैं उन सबको पढ़ चुका हूँ। ऋषि सनतकुमार ने कहा है- आपने अठ्ठारह विद्याएँ पढ़ी हैं जिनमें सब कुछ आता है और अलग से पढ़ने योग्य कुछ भी तो नहीं बचा, फिर मुझ से और क्या पढ़ना चाहते हो। नारदमुनि ऋषि से कहते हैं- हे ऋषिवर! मैं पढ़ा अवश्य हूँ परन्तु जाना-समझा नहीं, इसलिए आप से पढ़ने आया हूँ। इस बात को सुन कर ऋषि ने कहा आप यह कैसे कह सकते हो कि पढ़ा है पर नहीं जाना-समझा है। इसका उत्तर नारदमुनि ने ऐसा दिया-

सोऽहं भगवो मन्त्रविदेवास्मि नात्मविच्छ्रुतं ह्येव मे भगवद्दृशेभ्यस्तरति शोकमात्मविदिति।
सोऽहं भगवः शोचामि तं मा भगवाञ्छोकस्य, पारं तारयत्विति।
तं होवाच यद्वै किञ्चैतदध्यगीष्ठा नामैवैतत्।।

(छान्दोग्य ७.१.३)

अर्थात् हे ऋषिवर! यह जो मैंने अठ्ठारह विद्याएँ पढ़ी हैं, इससे मैं मन्त्रवित् तो बन गया हूँ परन्तु आत्मवित् नहीं बन पाया अर्थात् मुझे शब्दों का ज्ञान तो हो गया है पर आत्मा का ज्ञान नहीं हो पाया। यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि मैंने आप जैसे महान् ऋषियों-योगियों से सुना है कि जो आत्मा को जान जाता है, वह दुःख (शोक) सागर से तर जाता है। परन्तु हे ऋषिवर! मैं तो शोक-सागर में डूबा हुआ हूँ। हे ऋषिवर! आप मुझे इस दुःख-सागर से पार उतारिये। नारदमुनि के इस कथन को सुनकर ऋषिवर ने कहा हे नारद! तुमने अब तक जो भी पढ़ा या सीखा है, वह केवल मात्र **'नाम'** है।

यहाँ पर नारदमुनि ने मन्त्रवित् होने की बात कही है मन्त्रवित् का अभिप्राय है कि शब्दों का अर्थ शब्दों से जानना, उदाहरण के लिए- किसी ने किसी को कहा आत्मा नित्य है, अविनाशी है, सदा रहता है। आत्मा शब्द का अर्थ जीव है यह जीव भी शब्द है, ऐसा ही नित्य शब्द का अर्थ अविनाशी-सदा रहना ये भी शब्द हैं। शब्दों को अन्य शब्दों से जानना ही **'नाम'** है जो ऋषिवर ने **'नाम एव एतत्'** कह कर संकेत किया है। शब्द से अन्य शब्द को जानना, शब्द ज्ञान तो हो सकता है परन्तु शब्द का अर्थ (तत्त्व-यथार्थ) नहीं हो सकता। यदि शब्द के अर्थ को जानता है, तो आत्मा नित्य है, यह जानकारी होने पर मनुष्य आत्म-विषयक शोक नहीं कर सकता। जब कभी कोई आत्मा शरीर को त्याग (मृत्यु होने पर) कर अन्य शरीर को प्राप्त होता है तब मनुष्य को दुःखी नहीं होना चाहिए। क्योंकि उसने आत्मा को नित्य जाना है परन्तु वह दुःखी होता है। इसका सीधा अभिप्राय है कि वह आत्मा नित्य है, इस शब्द का अर्थ नहीं जाना है। फिर क्या जाना है? शब्द से अन्य शब्द को जाना है अर्थ को नहीं। इसी को शब्द-ज्ञान कहते हैं, इसी शब्द ज्ञान को नारदमुनि ने अपने शब्दों में **'मन्त्रवित्'** शब्द से स्पष्ट किया है। इस सन्दर्भ में तोते का उदाहरण यहाँ घटित होता है- किसी ने तोते को सिखाया है कि शिकारी आयेगा, जाल बिछायेगा, दाना डालेगा, तुम्हें नहीं फंसना है। तोते ने सीख लिया है और बोलता भी है। शिकारी आयेगा, जाल बिछायेगा, दाना डालेगा, हमें नहीं फंसना है। एक दिन ऐसा आया है कि शिकारी आकर, जाल बिछाकर, दाना डालकर बैठा है। तोते ने उन्हीं शब्दों को दोहराने लगा। शिकारी ने सोचा कि तोता अब नहीं फंसने वाला है परन्तु जब तोते ने देखा कि उसके मन पसन्द का दाना दिखाई दिया, उसने झट जाल में आ कर दाना चुगने लगा, उतने में वह फंस गया। ठीक इसीप्रकार आज के मानव सब कुछ जानते हुए (पढ़े-लिखे होते हुए) भी तोते के समान दुःख सागर में फंसते जा रहे हैं।

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट होता है कि आज का मनुष्य जो जानकारी रखता है वह जानकारी शब्दों तक सीमित है। इसलिए शब्द विद्या के होते हुए भी वह दुःखी है अर्थात् उसे शब्द का अर्थ (यथार्थता का) पता नहीं है। यदि अर्थ पता होता तो दुःखी नहीं होता परन्तु दुःखी हो रहा है, इसलिए अर्थ पता नहीं है। जहाँ पर अर्थ पता होता है वहाँ पर दुःख नहीं देखा जाता है। उदाहरण के लिए सड़क के बीचो-बीच खड़ा हो जाये और सामने से ट्रक आ जाये, तो वह सड़क के बीच खड़ा न हो कर वहाँ से हट जाता है। इसीप्रकार मनुष्य दुःख से बच जाता है। इससे यह सिद्धान्त (नियम) निकल कर आता है जहाँ-जहाँ शब्दों का यथार्थ जानकारी होती है वहाँ-वहाँ मनुष्य दुःख से दूर होता है और जहाँ-जहाँ केवल शब्द का अर्थ शब्द से जानता है वहाँ-वहाँ दुःख से दूर नहीं होता बल्कि दुःखी होता है। इसलिए नारदमुनि ने सनतकुमार जी से कहा है मैं शब्द

विद्या (मन्त्र विद्या) को जानता हूँ आत्मविद्या (अर्थ विद्या) को नहीं जानता हूँ। जहाँ-जहाँ व्यक्ति अर्थ विद्या को जानता है वहाँ-वहाँ दु:खों से बचा रहता है। अर्थ दो प्रकार के होते हैं- भौतिक (जड़) अर्थ और आध्यात्मिक (आत्मा, परमात्मा) अर्थ। जो व्यक्ति भौतिक अर्थों को यथार्थ रूप में जानते हैं वे भौतिक रूप से दु:खों को दूर कर लेते हैं और जो आध्यात्मिक अर्थों को और भौतिक अर्थों को यथार्थ रूप से जानते हैं, वे दोनों प्रकार (भौतिक, आध्यात्मिक) के दु:खों को दूर कर लेते हैं। अर्थों को यथार्थ रूप में जाने बिना दु:ख को दूर करने का और कोई मार्ग-विकल्प नहीं है।

यदि कोई मनुष्य यह कहता है कि शब्दों के साथ-साथ अर्थों को भी जानता हूँ, तो वहाँ वह व्यक्ति हानि और लाभ को यथार्थ रूप में नहीं जान पाता है। जिस क्रिया (कर्म) को वह व्यक्ति करता है, उससे उसे लाभ दिख रहा हो परन्तु वह लाभ यथार्थ में लाभ है या और कुछ है। यहाँ पर एक उदाहरण से समझना चाहिए कि एक युवक प्रात: काल सूर्योदय से पहले न उठकर ७ या ८ बजे उठता है। जिस कारण वह व्यायाम नहीं कर पाता है। यदि व्यायाम करना है तो प्रात: ५ बजे उठकर करना पड़ेगा। यदि ५ बजे उठते तो निद्रा का सुख नहीं मिलेगा। इसलिए निद्रा के लाभ को ध्यान में रखकर युवक प्रतिदिन निद्रा सुख लेता है। यहाँ पर निद्रा का लाभ तात्कालिक लाभ हो सकता है, परन्तु व्यायाम न करने से कितनी हानि हो रही है और होगी, इसका अनुमान नहीं लगाया जा रहा है। लोग केवल तात्कालिक लाभों को देख रहे हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि ऐसे लोग जीवन में दु:खी अधिक रहते हैं। ऐसा कर-करके अपने अमूल्य जीवन को यूँ ही समाप्त कर लेते हैं। यह एक उदाहरण मात्र है। मनुष्य अपने जीवन काल में ऐसे-ऐसे अनगिनत कर्मों को करता है, जहाँ उसे यह जानकारी नहीं होती है कि भविष्य में कितनी हानि उठानी पड़ेगी। इसलिए केवल शब्द विद्या को पढ़ने मात्र से कोई जानकार नहीं कहलायेगा, बल्कि शब्दों से अर्थों को यथार्थ (हानि व लाभ को जान कर केवल लाभ के लिए अपनाना ही अर्थों को जानना होता है) रूप से जान कर लाभ उठाना होता है। हाँ, यदि किसी अर्थ को यथार्थ रूप से जान कर व्यवहार में लाने से हो सकता है तात्कालिक हानि होती हो परन्तु भविष्य में पूर्ण लाभ होगा। उदाहरण के लिए सत्याचरण करना, चोरी त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन इत्यादि।

जो लोग जानते-समझते हुए भी अनुचित करते हैं, वे लोग यह निर्धारण नहीं कर पाते हैं कि तात्कालिक लाभ को लाभ मानना यथार्थ है अथवा भले ही तात्कालिक लाभ नहीं हो रहा हो परन्तु कालान्तर में लाभ अवश्य होगा और वही लाभ वास्तविक लाभ है। इसका अभिप्राय है कि वे शब्दों को जान रहे हैं परन्तु शब्दों का यथार्थ अर्थ को पूर्ण रूप से नहीं जान रहे हैं। इसलिए वे लोग शब्दों को जानते हुए भी दु:ख उठाते हैं। इन सब बातों का विश्लेषण करके और प्रत्यक्ष करके नारदमुनि ने अनुभव किया। इसीलिए वे सनतकुमार के पास जा कर अपनी अनभिज्ञता को स्वीकार करके कहते हैं- हे ऋषिवर! मैं तो '**मन्त्रवित्**' हूँ अर्थात् केवल शब्द, शब्द को जानता हूँ। '**आत्मवित्**' नहीं हूँ अर्थात् मैं जिन शब्दों को पढ़ा हुआ हूँ, उन शब्दों के अर्थों से मिलने वाले लाभों को पूर्ण रूप से नहीं जानता हूँ। इसलिए हे ऋषिवर! मैं उन शब्दों के अर्थों से लाभ लेने के लिए आपकी शरण में आया हूँ। आप मुझ पर कृपा करके आत्मविद्या को सिखाईये, जिससे मैं '**आत्मवित्**' बन कर अर्थों का पूर्ण लाभ ले सकूँ और शोक से तर सकूँ। नारदमुनि की बातों को जानकर महर्षि सनतकुमार ने जान लिया है कि नारदमुनि ठीक मार्ग को पकड़ना चाहते हैं वास्तव में नारदमुनि ने शोक को गहराई से अनुभव किया है, दु:खों की ठोकर खा-खाकर अच्छी तरह अनुभव किया है और ठोकर खाने का अवकाश नहीं है। यदि अभी भी नहीं सम्भाला जाये, तो विनाश ही होगा। ऐसी स्थिति को अनुभव कर चुके नारदमुनि की स्थिति को अच्छी प्रकार जान कर ऋषिवर नारदमुनि को शिष्य के रूप में स्वीकार किया और उनको आत्मविद्या सिखाना प्रारम्भ किया।

उपरोक्त प्रसंग को देने का एक मात्र अभिप्राय है कि आज भी हम इसी दौर से गुजर रहे हैं। हमारे पास शब्दों का अम्बार लगा हुआ है, हम इतने शब्दों को जानते हैं, पढ़े हैं, सुने हैं जिनकी गणना नहीं हो सकती है। हम इस दम्भ में रहते हैं कि हम बहुत जानते हैं-समझते हैं। मनुष्य अहंकार के कारण शब्दों के अर्थों (लाभों) की ओर ध्यान नहीं दे पाता है। इसलिए दु:खी होता रहता है। समझदारी उत्पन्न करके यदि हम अर्थों की ओर ध्यान देने लग जाये, तो हम भी '**आत्मवित्**' बन सकते हैं। आत्मवित् बनने के लिए योग को जीवन में उतारना होगा, संकल्प करना होगा और योग को करना प्रारम्भ कर देना चाहिए। यद्यपि योग के आठ अंग हैं फिर भी हमें मुख्य रूप से यम और नियम पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसका यह अभिप्राय नहीं है

कि बाकी अंगों को छोड़ दें। हाँ, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा और ध्यान रूपी अंगों का प्रयोग सीमित काल में होता है अर्थात् जब हम ध्यान करने के लिए बैठते हैं तब आसन लगाना है, प्राणायाम करना है, इन्द्रियों को विषयों से हटा कर मन के अनुरूप बनाना (यह प्रत्याहार) है, मन को एक स्थान पर लगाना (धारणा करनी) है और ध्यान करना है। ऐसी स्थिति केवल प्रातःकाल और सायंकाल सन्धि वेला में आती है। बाकी समय में यम और नियम का पालन करना है।

गम्भीरता से इस विषय में विचार करके देखा जाये, तो पता लगता है कि मनुष्य निद्रा के काल (६ घण्टे) को छोड़कर अठ्ठारह घण्टे जागृत रहता है और उनमें से यदि कोई प्रातः सायं को मिला कर दो घण्टे ध्यान करता है, तो भी सोलह घण्टे बचे रहेंगे। उन सोलह घण्टों में हम व्यवहार कर रहे होते हैं। उस व्यवहार काल में यदि हम यम और नियम का पालन अर्थों के अनुसार नहीं करते हैं, तो शब्दों को पढ़ना या सुनना व्यर्थ हो जायेगा। शब्दों को जिन्होंने नहीं पढ़ा या सुना वे भी अर्थों के अनुसार व्यवहार नहीं करते और जिन्होंने पढ़ा या सुना है, वे भी अर्थों के अनुरूप व्यवहार नहीं करते हैं। ऐसी स्थिति में पढ़े हुए और न पढ़े हुए इन दोनों में विशेष अन्तर नहीं होगा। दोनों ही दुःख-सागर में डूबे रहेंगे। न पढ़े हुए लोगों की अपेक्षा पढ़े हुए लोग और अधिक दुःखी रहेंगे। वेद भी ऐसा ही कहता है-

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायाꣳरंताः।।

(यजुर्वेद ४०.१२)

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि जो लोग विद्या पढ़े हुए नहीं होते हैं वे गहरे दुःख सागर में डूब जाते हैं परन्तु जो लोग शब्द विद्या पढ़ कर भी शब्दों के अर्थों को नहीं जानते हैं, वे उन न पढ़े हुए लोगों से भी और अधिक गहरे दुःख सागर में डूब जाते हैं। इसलिए शब्दों के अर्थों के अनुसार चल कर ही मनुष्य दुःख सागर से तर सकता है। यह ही '**आत्मवित्**' का अभिप्राय है।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

सत्यार्थ प्रकाश का प्रचार प्रसार

गत विश्व पुस्तक मेले में सभा द्वारा पांच हजार सत्यार्थप्रकाश (हिन्दी), दो हजार सत्यार्थप्रकाश (अंग्रेजी), ऋषि दयानन्द की जीवनी पाँच हजार, दो हजार सी.डी. का निःशुल्क वितरण किया। जिसकी सज्जनों द्वारा बहुत प्रशंसा की गई। अब सज्जनों का फिर उसी प्रकार के कार्यक्रम की मांग कर रहे हैं।

इस बार सभा ने कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए सत्यार्थप्रकाश को चार भाषाओं में वितरित करने की योजना बनाई है, क्रमशः हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी, उर्दू का सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन की प्रक्रिया में है।

ऋषि जीवनी भी अंग्रेजी, हिन्दी दोनों भाषाओं में तैयार कराई जा रही है। सभी धर्मानुरागियों से निवेदन है, इस कार्य के लिए आप जितना अधिक सहयोग प्रदान करेंगे। सभा उतने ही विशाल रूप में इस कार्यक्रम को सम्पन्न करेगी। पूर्व की भाँति आपका सहयोग व समर्थन प्राप्त होगा।

सहयोग राशि निम्न क्रमांक के खातों में जमा कराई जा सकती है अथवा बैंक ड्राफ्ट, चेक द्वारा प्रेषित कर कार्यालय में जमा कराई जा सकती है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर। IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर। IFSC - SBIN0007959

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

जिज्ञासा समाधान – ७४

– आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा १– वेदों व उपनिषदों में अथवा उपदेशकों द्वारा अवगत हुआ है कि भूतकाल की सुलझी–अनसुलझी चर्चाओं, विषयों को दफना देना चाहिये किन्तु अनेकानेक उपायों द्वारा भूतकाल की बातों को दफनाने में आत्मा व मन अक्षम हो रहे हैं।

मेरी आयु ८४ वर्ष की है तथापि स्मरण शक्ति का ह्रास अभी भी नहीं हुआ है। तथापि भूतकाल की बातों व चर्चाओं से में अत्यन्त दु:खी हूँ। कृपया समाधान परोपकारी में देवे।

– रामनारायण जिज्ञासु, एच.बी.आर. औषधि भण्डार, बिलासपुर, छ.ग.

समाधान – हमारे मन में अनेक प्रकार के अच्छे–बुरे संस्कार विद्यमान रहते हैं। इन्हीं संस्कारों के आधार पर हम अच्छे–बुरे कर्म करते रहते हैं। ऐसा करके उन संस्कारों को हम और गहरा कर लेते हैं। ज्ञान, कर्म, उपासना के बिना हम एक क्षण भी नहीं रह रहे होते। अपने शुद्ध संस्कारों के आधार पर व्यक्ति या तो शुद्ध ज्ञान, शुद्ध कर्म वा शुद्ध उपासना करता है अथवा अशुद्ध संस्कारों के आधार पर अशुद्ध ज्ञान, अशुद्ध कर्म वा अशुद्ध उपासना करता है। ऐसा करने पर हमारे उसी प्रकार के संस्कार अधिक–अधिक गहरे होते चले जाते हैं। जो संस्कार (शुद्ध अथवा अशुद्ध) अधिक प्रबल होंगे हम उन्हीं संस्कारों के वशीभूत होकर कर्म कर रहे होंगे, करते हैं। इसलिए हमें अपने मन पर जितना हो सके उतना अच्छे संस्कारों की छाप डालनी चाहिए। अर्थात् अच्छी वृत्तियाँ उठाएँ, अच्छे कार्य करें, शुद्ध ज्ञान का अवलम्बन करें, शुद्ध उपासना करें, इससे हमारे संस्कार परिस्कृत होंगे, अच्छे बनेंगे। इसके विपरीत संस्कार परिस्कृत नहीं होंगे।

वेद अथवा उपनिषद् में ऐसा आया हो कि भूतकाल की सूलझी–अनसुलझी चर्चाओं को, विषयों को दफना देना चाहिए ऐसा पढ़ा–सुना तो नहीं है। हाँ ये अवश्य है कि अपने ज्ञान को बढ़ाकर अविद्या के संस्कारों को नष्ट कर देना चाहिए जिससे जीवात्मा निर्मल होकर मोक्ष को प्राप्त हो सके। संस्कारों को न कर देने पर पिछली बातों को भूलता तो फिर भी नहीं

उपदेशकों द्वारा जो आपको अवगत हुआ वह केवल अनसुलझी बातों के लिए हो सकता है और जो बातें सुलझ गईं हैं उनको भूलना नहीं होता, उनसे जो अनुभव प्राप्त हुआ है उससे अपने कार्य सिद्ध करने होते हैं, न कि उनको दफनाना। अब रही अनसुलझी बातों को दफनाने वाली बात तो यह हमें उचित प्रतीत नहीं हो रहा क्योंकि जो अनसुलझी बात है, उसको सुलझाने में ही कल्याण है। ये क्या कि अनसुलझे का अनसुलझा छोड़ दें। बुद्धिमत्ता और निपुणता तो इसी में है कि जो बात अनसुलझी है उसको सुलझा लें। अनसुलझा न छोड़ें। कभी न कभी तो सुलझाना ही पड़ेगा। आज नहीं तो कुछ काल बाद, इस जन्म में नहीं तो अगले जन्मों में। जिस जीवात्मा ने अपने ज्ञान को सुलझा लिया है, वही जीवात्मा संसार व ईश्वर से सुलझा हुआ व्यवहार करके मोक्ष को प्राप्त करता है और इसके विपरीत जो जीवात्मा अपने ज्ञान को नहीं सुलझा पाया वह संसार व ईश्वर से भी सुलझा हुआ व्यवहार न करके अपने आपको संसार में ही उलझाये रखता है। इसलिए सुलझी–अनसुलझी बातों को दफनाएँ नहीं। सुलझी बातों का लाभ उठावें और अनसुलझी को सुलझा लेवें।

आपके कथन से जो प्रतीत हो रहा है अब उस पर आते हैं। सुलझी–अनसुलझी बातों से आपका अभिप्राय सुख देने वाली व दु:ख देने वाली बातों से है। इनको आप भूलना, दफनाना चाहते हैं उनको दफनाइये मत आप उनको द्रष्टा भाव से देखिए, उनका सामना किजिए। उनसे भागिए मत, कब तक भागेंगे? भागते–भागते तो वृद्धावस्था आ गई। इनका तो सामना करना ही पड़ेगा। जो सामना कर इनको अपने वशीभूत कर लेता है, वही वीर कहाता है। यथार्थ में इस काम को सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता इस काम को एक उत्तम कोटी का उपासक कर सकता है। उत्तम कोटी का साधक इन बातों से प्रभावित नहीं होता। भूलता तो वह भी नहीं है किन्तु दु:ख देने वाली वा सुख देने वाली बातों का अपने ऊपर प्रभाव नहीं पड़ने देता।

सामान्य व्यक्ति के ऊपर इनका प्रभाव अवश्य पड़ता है अथवा यूँ कहिए वह इनसे प्रभावित होता रहता है। इसलिए वह कभी सुखी तो कभी दु:खी होता रहता है। सामान्य व्यक्ति सुलझी हुई, सुख देने वाली बातों को दफना, भूलना भी नहीं चाहता। हाँ अनसुलझी दु:ख देने वाली बातों को वह अवश्य भूलना दफनाना चाहता है जो कि

उसकी नासमझी का द्योतक है। समझदारी इसी में है कि व्यक्ति अपने विवेक को बढ़ाए, परिस्थियों को समझे और अपने आपको दु:खी न होने दे।

इस संसार में परमेश्वर की ऐसी व्यवस्था है कि व्यक्ति के ऊपर कितना भी बड़ा दु:ख क्यों न आ जाये वह दु:ख कालक्रम से स्वाभाविक रूप से दूर होता चला जाता है। उस दु:ख को स्मृति में रहते हुए भी भूल सा जाता है। किन्तु जब कभी वह स्मृति उभरती है तब व्यक्ति पुन: दु:ख की अनुभूति करता है परन्तु जैसे पहले दु:ख हुआ था वैसी अनुभूति नहीं कर रहा होता। अल्प दु:ख की अनुभूति कर रहा होता है।

विवेकी व्यक्ति इस दु:ख को देखकर संसार से वैराग्य को प्राप्त करता है व अविवेकी दु:ख को देख शोक को प्राप्त होता रहता है।

आपकी अवस्था ८४ वर्ष की है और आपकी स्मरण शक्ति का ह्रास नहीं हुआ है, यह आपके लिए प्रसन्नता की बात है। जब आप स्मरण करेंगे कि कितनी बातें सुलझी हुई हैं और कितनी अनसुलझी तो आप पायेंगे कि बहुत सी बातें सुलझी हुई हैं जिनपर आप ध्यान नहीं देते। आपका ध्यान उन थोड़ी सी अनसुलझी बातों पर जाता है जो आपको दु:ख देती हैं। इसलिए इस जीवन के अन्तिम पड़ाव में सुखदायक बातों का स्मरण कर प्रभु भक्ति करते हुए अपने शेष जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत करें इसी में आत्मा का कल्याण है और हो सके तो सावधान होकर ईश्वर का सहारा लेते हुए अनसुलझी बातों को सुलझा लेवें। ये सुलझन अगले जन्म में भी काम आयेगी।

जिज्ञासा २- 'आस्था भजन' चैनल पर प्रस्तुत समाधिपाद (१:१) की मीमांसा के सन्दर्भ में 'अथ', 'योग' आदि शब्दों की नव व्याख्या सारगर्भित एवं रोचक है। 'अथ' शब्द के छ: अर्थ हैं। संस्कृत भाषा में आपने समझाया उदाहरण देकर। सम्भव हो तो 'अथ' शब्द को हिन्दी में वाक्य बनाकर समझाएँ। 'समाधि' शब्द का अर्थ है- 'देखना'। कृपया समाधि शब्द को भी हिन्दी में वाक्य बनाकर समझाएँ।

विश्वास है हिन्दी-संस्कृत में प्रचलित बहुत सारे शब्दों की मीमांसा आपके द्वारा की जाएगी। सम्भव हो तो शब्दार्थ-मीमांसा का एक ग्रन्थ अवश्य लिखिए।

-अजय कुमार मिश्र, ए-३३२, तिगड़ी, नई दिल्ली-११००६२

समाधान - आप अथ और समाधि शब्दों को हिन्दी वाक्य में देखना चाहते हैं। दोनों के अर्थ तो आपने सुन ही चुके हैं। वैसे आपको बता दें कि ये दोनों शब्द संस्कृतनिष्ठ हैं हिन्दी निष्ठ नहीं हैं। फिर भी हिन्दी वाक्य में आपको प्रयोग करके दिखायेंगे। अन्य पाठकों की दृष्टि से इन दोनों शब्दों के अर्थ यहाँ लिखते हैं। अथ-

अथाथो संशये स्यातामधिकारे च मङ्गले।
विकल्पानन्तरप्रश्नकात्स्न्यारम्भसमुच्चये।।

संशय, अधिकार, मङ्गल, विकल्प, पश्चात्, प्रश्न, पूर्णता, प्रारम्भ और समुच्चय=संग्रह (संघात) ये नौ अर्थ अथ शब्द के हैं।

समाधि=समाधान, दर्शन, संग्रह करना, एकाग्र करना, भावचिन्तन आदि अर्थ समाधि के हैं।

अथ के हिन्दी वाक्य-अथ करता हूँ=प्रारम्भ करता हूँ। इसमें अथ नहीं=इसमें विकल्प नहीं है। अथ करूंगा=पश्चात् करूंगा। यहाँ अथ नहीं है= यहाँ संशय नहीं है आदि।

समाधि के हिन्दी वाक्य-इसकी समाधि लग गई=इसका समाधान हो गया अथवा इसको दर्शन हो गये। ये समाधिस्थ है=ये भावचिन्तन में है आदि।

आपने शब्दार्थ मीमांसा ग्रन्थ की बात कही इसके लिए हम आपका धन्यवाद करते हैं। भविष्य में कभी योजना बनी तो इस प्रकार के ग्रन्थ की रचना की जा सकती है।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

'दर्शन' का दर्शन करें

- मुमुक्षु मुनि

परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से, पता नहीं कितनी ही योनियों को पार करके हमें सभी साधनों से युक्त यह श्रेष्ठतम मानव तन मिला है। तो इस श्रेष्ठतम तन का लक्ष्य भी श्रेष्ठतम होना चाहिये। किन्तु इसे भूलकर हम केवल भोग-विलास, भौतिक साधनों के संग्रह करने, ऊचें-ऊचें भवनों का निर्माण करने, खाने-पीने, मौज उड़ाने में ही लगे रहते हैं। फिर अति होने पर इनके ही क्लेश जब सताने लगते हैं, तब व्यक्ति भागता है शान्ति की खोज में, आध्यात्म की ओर। सच्ची शान्ति तो मिलेगी ज्ञान से- यथार्थ ज्ञान से। परन्तु ज्ञान रहित व्यक्ति सीधे परमात्मा की शरण में जाना चाहता है और इसी तर्ज पर आजकल जगह-जगह दुकानें खुली हैं सीधे साक्षात्कार कराने की, आध्यात्मिक शान्ति दिलाने की। कोई सहजयोग के नाम से, कहीं ब्रह्मकुमारी के नाम से, तो कहीं साई बाबा के नाम से। जो सीधे परमात्मा के साक्षात्कार की घोषणा करते हैं। जबकि परमात्मा तो दूर वे स्वयं अपने स्वरूप के विषय में भी नहीं जानते हैं। इस सब के लिये हमारे ऋषियों, मुनियों द्वारा प्रदत्त आध्यात्म ज्ञान का अध्ययन करना होगा। ऋषियों द्वारा रचित दर्शन शास्त्रों का अध्ययन करना होगा।

तो पहले दर्शन को ही जान लें।

''दृश्यन्ते-ज्ञायन्ते-अनुभूयन्ते याथातथ्यतः आत्म-परमात्मनो बुद्धीन्द्रियादयोऽतीन्द्रियाःसूक्ष्मविषया येन तद् दर्शनम्।''

अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा-परमात्मा और इन्द्रियों आदि सूक्ष्म विषयों की यथार्थरूप या प्रत्यक्ष अनुभूति होती है। संक्षेप में **''दृश्यते अनेन इति दर्शनम्''**। अर्थात् जिससे देखा जाता है, उसे दर्शन कहते हैं। इस यथार्थता और सत्यता को जानने के लिये चाहिये प्रमाण और दर्शन शास्त्र से ही इन प्रमाणों का ठीक-ठीक ज्ञान हो पाता है।

चार वेद ईश्वरीय ज्ञान के भण्डार हैं। इन वेदों के उपांगों को दर्शनशास्त्र भी कहते हैं। ये हैं- योग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा। इनके अतिरिक्त चार्वाक, आर्हत और बौद्ध-दर्शन इन तीन नास्तिक दर्शनों को भी भारतीय दर्शनों के अन्तर्गत स्वीकार किया जाता है। आगे इनकी संक्षेप में चर्चा करते हैं।

महर्षि पतञ्जलि द्वारा रचित **योगदर्शन** पञ्चमहाभूत, सूक्ष्मभूत, इन्द्रियों, मन, अहंकार, बुद्धि, मूल प्रकृति, आत्मा, परमात्मा आदि तत्त्वों को साक्षात् करने का उपाय बताता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि योग के आठ अङ्ग हैं, जिनके अनुष्ठान से चित्त की शुद्धि होती है। चंचल चित्त को शान्त करने के लिए यह दर्शन ग्रन्थ अभ्यास, वैराग्य आदि उपायों की भी चर्चा करता है। महर्षि कपिल कृत **सांख्य दर्शन** में पुरुष के बन्धन के कारण की विस्तृत चर्चा है। जीवात्मा का चेतन स्वरूप होना, स्वतः आनन्दस्वरूप न होना, देहादि से पृथकत्त्व और बहुत्त्व, कर्म करने में स्वतन्त्र, फल भोगने में परतन्त्र होना तथा आनन्दाभिलाषी होकर मोक्षमार्गी होना आदि की विस्तृत चर्चा है। महर्षि कणाद द्वारा रचित **वैशेषिक दर्शन** में अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि के लिए समस्त पदार्थों का धर्म और धर्मी के रूप में निरूपण किया गया है। द्रव्य धर्मी तथा गुण उसका धर्म है। शास्त्र में अभ्युदय का तात्पर्य भौतिक सुख-सुविधाओं की उपलब्धि से है। द्रव्यादि पदार्थों के यथार्थ ज्ञान से हम इस अभ्युदय की प्राप्ति कर सकते हैं। शास्त्र में संकेत है कि यह शरीर नश्वर है। एक दिन पैदा हुआ है तो एक दिन अवश्य नष्ट हो जायेगा। इस वास्तविकता को न समझते हुए व्यक्ति इसी के संवारने-सुधारने में फंसा रहता है। आगे जन्म-जन्मान्तर में भी यही क्रम चलता रहता है। इन पदार्थों का वास्तविक ज्ञान आत्मा के निःश्रेयस के मार्ग पर प्रवृत्त करता है। इसी रूप में द्रव्यादि का तत्त्व ज्ञान निःश्रेयस सिद्धि के लिये उपयोगी समझना चाहिये।

न्यायदर्शन का मुख्य प्रतिपाद्य विषय प्रमाण है। महर्षि गौतम द्वारा समस्त दर्शन का अधिक भाग प्रमाण के स्वरूप और उसके प्रयोग की प्रक्रियाओं को प्रस्तुत करने के लिये लिखा है। इसके प्रथम सूत्र में जिन सोलह पदार्थों का जिक्र है, वे हैं- प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल,जाति और निग्रहस्थान। इसमें प्रमेय के अतिरिक्त संशयादि समस्त विद्याओं का उपयोग केवल प्रमाण के पूर्ण एवं निर्दोष स्वरूप को प्रस्तुत करने के लिये है। प्रमेय भी प्रमाणों का लक्ष्य क्षेत्र होने के कारण उनके स्वरूप को निखारने में सहयोगी है। न्यायदर्शन में आत्मा, शरीर, इन्द्रियाँ, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख और अपवर्ग बारह प्रमेय गिनाये गये हैं। आत्मा इनमें मुख्य है। शेष सभी आत्मा से ही सम्बद्ध हैं। साक्षात्

या परम्परा से इन सबका उपयोग आत्मा के लिये है। भाष्यकार वात्स्यायन ने सूत्रकार गौतमऋषि के आशय को अन्तर्दृष्टि से समझ कर शास्त्र के आरम्भ में समस्त यथार्थता व तत्त्व को चार विद्याओं में परिसमाप्त किया है। प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय और प्रमिति। वस्तुतः अर्थतव को समझाने और उसके विवेचन की यह उपयुक्त प्रक्रिया है। उसी का प्रस्तुतीकरण सांगोपांग रूप से न्यायशास्त्र में हुआ है।

सूत्रों का पदानुपूर्वी संप्रयोजन- प्रमाण की प्रवृति प्रमेय में तभी बनती है, जब संशय अंकुरित होता है। अतः प्रमेय के पश्चात् संशय का पाठ है। संशय तभी जाग्रत होता है, जब व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य से कहीं प्रवृत्त होना चाहता है। तब प्रयोजन पढ़ा गया है। विशिष्ट प्रयोजन पहले किसी अनुकूल अनुभव के आधार पर उभरता है। अतः आगे दृष्टान्त कहा। यह सब खेल जिन पर अवलम्बित है वे अवयव इसके आगे पढ़े गये हैं। अवयवों के प्रसंग में ऊहापोह द्वारा कोई निर्णय निखार में आता है, अतः आगे तर्क और निर्णय पढ़े गये हैं। इस प्रकार कथनोपकथन केवल तीन विधाओं में सम्भव है। आगे उन्हीं का उल्लेख है- वाद, जल्प, वितण्डा। इनमें उत्तर की अपेक्षा पूर्व-पूर्व श्रेष्ठ है। इन चर्चाओं में दब जाने पर व्यक्ति अपनी खाल बचाने के लिये दूषित प्रयोग करता है। उन्हीं को अन्त में हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान पदों से अभिव्यक्त किया है।

मीमांसा- शब्द का अर्थ-जिज्ञासा=जानने की इच्छा है। जैमिनी मुनि ने **अथातो धर्मजिज्ञासा** और वेद व्यास ने **''अथातो ब्रह्मजिज्ञासा''** सूत्रों में जिज्ञासा शब्द का प्रयोग किया है।

किसी भी विषय में जिज्ञासा होने पर मनुष्य उस विषय को तत्त्वतः जानने के लिये प्रयत्न करता है। मीमांसा शास्त्र विचारशास्त्र भी कहाता है। भारतीय दर्शनशास्त्रों में मीमांसादर्शन का विषय, आकार आदि दृष्टियों से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। मीमांसादर्शन के विषय भेद से दो भाग है- पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा। पूर्व मीमांसा में १६ अध्याय और उत्तर मीमांसा में चार अध्याय हैं। इनमें १३ से १६ तक चार अध्याय सङ्कर्षकाण्ड के नाम से व्यवहृत होते हैं। शबर स्वामी ने सङ्कर्षकाण्ड को छोड़कर शेष द्वादशाध्यायी पर ही अपना भाष्य लिखा, जिसका परिमाण लगभग २४ सहस्र श्लोक हैं। सूत्रों के अधिकरणों और भाष्यों को देखने से पता चलता है, भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के ब्राह्मण ग्रन्थों तथा गृहसूत्र, श्रौतसूत्र, कल्पसूत्रों में जो अनेक मत उत्पन्न हो गये थे उन्हीं को सुलझाने के लिये जैमिनी ने अपने सूत्र रचे। पूर्व मीमांसा ज्ञान काण्ड है, इसका सम्बन्ध उपनिषदों से है। पूर्व मीमांसा के १२ अध्यायों में ६० पाद, ८९० अधिकरण और २७२१ सूत्र हैं। जबकि अन्य पांचों दर्शन में कुल २११६ सूत्र हैं। मीमांसा के सूत्रों की रचना जैमिनी ने की तथा अधिकरणों की रचना शबर स्वामी की है। वास्तव में मीमांसा ग्रन्थ यज्ञ का ग्रन्थ नहीं है। यज्ञ सम्बन्धी कृत्यों के केवल उदाहरण दिये गये हैं। वास्तव में मीमांसा का उद्देश्य है भाषाज्ञान। भाषा क्या है? शब्द क्या है? अर्थ क्या है? शब्द और अर्थ का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है? शब्द जातिवाचक है या व्यक्तिवाचक? शब्द से वाक्य कैसे बनते हैं? वाक्यों का क्या अर्थ है? आदि का मीमांसा में सर्वोत्तम विवेचन है।

भारतीय षड्दर्शनों में महर्षि वेदव्यास द्वारा विरचित **वेदान्त दर्शन** का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसे शारीरिक सूत्र या उत्तर मीमांसा भी कहते हैं। इस पर अनेक विद्वानों ने भाष्य-टीका आदि लिखी है। वर्तमान में उपलब्ध भाष्यों में अद्वैतवादी स्वामी शंकराचार्य का भाष्य प्राचीन और प्रमुख माना जाता है। इनके अतिरिक्त रामानुजाचार्य, एवं वल्लभाचार्य आदि ने भी इस दर्शन का भाष्य किया है।

वर्तमान युग के दर्शनाचार्य स्वामी आत्मानन्द सरस्वती एवं वेदानन्द सरस्वती (दयानन्द तीर्थ) ने ब्रह्ममुनि का भाष्य पूर्वोक्त दोषों से रहित बताया है। वेदान्त दर्शन का प्रतिपाद्य विषय जगत की उत्पति में परमात्मा का निमित्त कारण होना परमात्मा के अधीन प्रकृति का उपादान कारण कहा गया है।

वेदान्त दर्शन में चार अध्याय, प्रत्येक में चार-चार पाद कुल १६ पाद और कुल ५५५ सूत्र हैं। कुछ विद्वान् इन दर्शनों में परस्पर विरोध का कथन करते हैं, महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में उत्तर देते हुए कहते हैं- जैसे वैद्यक शास्त्र में निदान, चिकित्सा, औषधिदान और पथ्य के प्रकरण भिन्न-भिन्न कथित हैं, परन्तु सबका सिद्धान्त रोग की निवृत्ति है। वैसे ही इन शास्त्रों के विषय में भी समझना चाहिए। ये दर्शन अपने-अपने प्रतिपाद्य विषय को प्रस्तुत करते हुए एक दूसरे के पूरक हैं। सभी दर्शनों का प्रतिपाद्य विषय अध्यात्म अधिभूत के अन्तर्गत आ जाता है। कहीं यदि अधिभूत प्रधान है वहाँ अध्यात्म आंशिक है और जहाँ अध्यात्म प्रधान है वहाँ अधिभूत का विवेचन आंशिक हुआ है। इनमें कुछ भी विरोध नहीं है। इति।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (प्राथमिक व द्वितीय स्तर)

दिनांक : १४ से २१ जून, २०१५

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ

में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१४ से २१ जून, २०१५- **योग-साधना शिविर (प्राथमिक व द्वितीय स्तर),**
सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन नि:शुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

।। ओ३म् ।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

मनुस्मृति और उसका यथायोग्य दण्डविधान

- कन्हैयालाल आर्य

भारतीय प्राचीन साहित्य में मनु, याज्ञवल्क्य आदि महर्षियों के द्वारा रचित धर्मशास्त्रों को हम कानून के ग्रन्थ मानते हैं। उनकी व्यवस्था अपने काल में समाज को माननीय रही है। भारत वर्ष में जब कानून का निर्माण हुआ, उसका आधार नैतिक उत्तरदायित्व था। बहुत से गुरुतर अपराधों के दण्ड स्वरूप प्रायश्चित्त भी बनाये गये हैं जो वास्तव में आत्मशोधन हैं। ऐसे अपराधी जो वास्तव में प्राकृत अपराधी न होते थे, वे अपने अपराधों के लिए, चाहे वे भूल से किए गए हों, चाहे परिस्थिति से विवश हो कर, स्वेच्छा से प्रायश्चित्त करते थे और ये प्रायश्चित्त दण्ड विधानों की अपेक्षा बहुत ही महत्त्वपूर्ण हुआ करते थे।

दण्ड देते समय विचारणीय बातें- महर्षि मनु ने अध्याय ८ के श्लोक संख्या १२६ में लिखा है:-

अनुबन्धं परिज्ञाय देशकालौ च तत्त्वतः।
सारापराधौ चालोक्य दण्डं दण्ड्येषु पातयेत्।।

अर्थ- न्यायकर्ता, अपराधी का इरादा, षड्यन्त्र या बार-बार किये गये अपराध को और देश और काल को यथावत् सप्रमाण जानकर तथा अपराधी की शारीरिक एवं आर्थिक शक्ति और अपराध का स्तर देख-विचार कर दण्डनीय लोगों को दण्ड दे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश में कहा है- जो अत्यन्त निर्धन हो तो उससे कम और धनाढ्य हो तो उससे दूना, तिगुना, चोगुना तक भी दण्ड ले लेवें अर्थात् जैसा देश, जैसा काल और जैसा पुरुष हो उस का जैसा अपराध हो वैसा ही दण्ड करें। यदि अधर्म से दण्ड दिया जो तो महर्षि मनु ने क्या व्यवस्था दी है यह बात अध्याय ८ के श्लोक सं. १२७ से प्रकट होती है:-

अधर्मदण्डनं लोके यशोघ्नं कीर्तिनाशनम्।
अस्वर्ग्यं च परत्राणि यस्मात्तत्परिवर्जयेत्।।

अर्थ- अधर्म या अन्यायपूर्वक दण्ड देने से यश और कीर्ति का नाश होता है, पर लोक में भी स्वर्ग प्राप्त नहीं होता, इसलिए अधर्मयुक्त दण्ड किसी पर न करें। जो राजा अपराधियों को दण्ड नहीं देता और जो अपराधी नहीं है उस को दण्ड देता है उस की क्या स्थिति होती है इसका बहुत तार्किक उत्तर महर्षि मनु ने अध्याय ८ के श्लोक संख्या १२८ में दिया है:-

अदण्ड्यान् दण्डयन् राजा दण्डयांश्चैवाप्यदण्डयन्।
अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति।।

अर्थात् जो राजा दण्ड देने योग्य को छोड़ देता और जिनको दण्ड नहीं देना चाहिए उसको दण्ड देता है वह जीता हुआ बड़ी निन्दा को और मरे पीछे बड़े दुःख को प्राप्त होता है। महर्षि मनु के दण्ड विधान को देखने से लगता है कि दण्ड विधानकार बड़े ही न्यायकारी थे, वह इस बात को जानते थे कि राजा को दण्ड विधान बड़े विवेक से करना चाहिए।

तस्माद्यम इव स्वामी स्वयं हित्वा प्रियाप्रिये।
वर्तेत याम्यया वृत्त्या जितक्रोधो जितेन्द्रियः।।

- मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक १७३

राजा को चाहिए कि वह स्वयं अपने प्रिय और अप्रिय पर विचार न करके यम के सामने क्रोध को जीत कर जितेन्द्रिय होकर यमराज के समान पक्षपात शून्य होकर दण्ड विधान करे। जो राजा मोह के वशीभूत होकर अधर्मपूर्वक कार्य करता है उसकी व्यवस्था महर्षि मनु ने अध्याय ८ के श्लोक सं. १७४ में इस प्रकार की है-

यस्त्वधर्मेण कार्याणि मोहात्कुर्यान्नराधिपः।
अचिरात्तं दुरात्मनं वशे कुर्वन्ति शत्रवः।।

जो राजा मोह से वशीभूत होकर अधर्मपूर्वक कार्य करता है उस दुष्टात्मा राजा को शत्रु शीघ्र ही वश में कर लेते हैं। चोरों और डाकुओं के लिए महर्षि मनु की व्यवस्था निम्नलिखित है-

न होढेन विना चोरं घातयेद्धार्मिको नृपः।
सहोढं सोपकरणं घातयेदविचारयन्।।
ग्रामेष्वपि च ये केचिच्चौराणां भक्तदायकाः।
भाण्डावकाशदाश्चैव सर्वांस्तानपि घातयेत्।।

मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक २७०-२७१ में यदि अपराधी के पास चोरी का माल और चोरी करने के औजार प्राप्त हो तो बिना अपराध पर विचार किए उस का वध करा दे। चोरों के षड्यन्त्र में सम्मिलित होने वाले पदाधिकारियों को भी मनु ने चोरों के समान ही दण्ड देने की आज्ञा दी है।

राष्ट्रेषु रक्षाधिकृतान्सामन्तांश्चैव चोदितान्।
अभ्याघातेषु मध्यस्थाञ्छिष्याच्चौरानिव द्रुतम्।।

मनु स्मृति अध्याय ९ श्लोक २७२ में जो राष्ट्र में रक्षा के निमित्त पुलिस अधिकारी, सामन्त लोग हैं और जो क्रूर लोग हत्याओं के मामले में मध्यस्थ होकर चोरी व डाकजनी

के लिए चोरों को उकसाते हैं, उनको भी चोरों के समान दण्ड देना चाहिए। चोरों, डाकुओं, जेबकतरों के लिए मनु ने प्राणवध की आज्ञा प्रदान की है-

सन्धिं छित्त्वा तु ये चौर्यं रात्रौ कुर्वन्ति तस्कराः।
तेषां छित्त्वा नृपो हस्तौ तीक्ष्णे शूले निवेशयत्।।
अङ्गुलीर्ग्रन्थिभेदस्य छेदयेत्प्रथमे ग्रहे।
द्वितीये हस्तचरणौ तृतीये वधमर्हति।।

- मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक संख्या २७६ व २७७

रात के समय जो चोर सेंध लगाकर चोरी करते हैं, राजा उनके दोनों हाथ काट कर तीखे शूल पर चढ़ा दे।

गांठ कतरने वाले (जेबकतरे) की पहली बार उंगली काट दे, उसी अपराध में दूसरी बार पकड़े जाने पर दोनों हाथ काट दे और तीसरी बार उस का वध करना ही उचित है। इसी प्रकार जो लोग चोरों को अग्नि, अन्न, शस्य और निवास स्थान दे, उनका चुराया माल रखें, उनको भी चोर के समान दण्ड दें। जो जलाशय को तोड़े, उसे जल में डुबाकर मरवा दें, जो कोषागार, आयुधशाला, देवालय को तोड़े उसे भी प्राण दण्ड दें। कुलीन पुरुषों और विशेषकर नारियों के बहुमूल्य आभूषणों को चुरा लेने पर प्राण दण्ड की व्यवस्था दी है। आततायी चाहे किसी भी आयु का क्यों न हो उसे भी मरवा डालेः-

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्।।

(मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक ३५०)

क्या गुरु, क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या विद्वान् यदि वह आततायी होकर आता है तो उसको बिना विचारे ही मार डाले।

स्त्री-सम्बन्धी अपराधों - जो कामना रहित कन्या का सतीत्व नष्ट करे वह तुरन्त मार डालने योग्य है-

योऽकामां दूषयेत्कन्यां स सद्यो वधमर्हति।
सकामां दूषयंस्तुल्यो न वधं प्राप्नुयान्नरः।।

(मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक ३६४)

यदि सामान वर्ण का पुरुष सम्भोगेच्छा से रहित कन्या को बलात् दूषित करे वह शीघ्र ही प्राणवध करने योग्य है। सम्भोगेच्छा वाली कन्या अर्थात् सहमति रखने वाली कन्या को दूषित करने पर वध दण्ड के योग्य नहीं है। कोई कन्या ही यदि किसी कन्या का कौमार्य भंग कर दें तो उस के लिए मनुस्मृति के अध्याय ८ के श्लोक सं. ३७० में निम्न व्यवस्था है-

या तु कन्यां प्रकुर्यात्स्त्री सा सद्यो मौण्ड्यमर्हति।
अङ्गुल्योरेव वा छेदं खरेणोद्वहनं तथा।।

यदि कोई महिला किसी कन्या का कौमार्य भंग कर दे तो उसका शीघ्र सिर मुड़वा देना चाहिए। या दो अंगुलियाँ काट देनी चाहिए तथा उसको गधे पर बिठा कर घुमाना चाहिए। दम्भपूर्वक व्यभिचार में प्रवृत्त होने पर स्त्री को दण्डः

भर्तारं लङ्घयेद्या तु स्त्री ज्ञातिगुणदर्पिता।
तां श्वभिः खादयेद्राजा संस्थाने बहुसंस्थिते।।

(मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक ३७१)

जो स्त्री अपनी जाति गुण के घमण्ड से पति को छोड़ व्यभिचार करे उसको बहुत स्त्री और पुरुषों के सामने कुत्तों से राजा कटवाकर मरवा डाले। दम्भपूर्वक व्यभिचार में प्रवृत्त होने वाले पुरुष को दण्ड-

पुमांसं दाहयेत्पापं शयने तप्त आयसे।
अभ्यादध्युश्च काष्ठानि तत्र दह्येत पापकृत्।।

(मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक३७२)

अपनी स्त्री को छोड़कर जो पुरुष परस्त्री या वेश्यागमन करे उस पापी को लोहे के पलंग को अग्नि में तपा लाल कर उस पर सुला के जीते को बहुत पुरुषों के सम्मुख भस्म कर डाले। उपरोक्त दो श्लोक के सम्बन्ध में डॉ. सुरेन्द्र कुमार मनुस्मृति भाष्यकार ने मनुस्मृति में महर्षि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश के ६वें समुल्लास के प्रश्नोत्तर को इस प्रकार प्रकाश डाला है-

प्रश्न- जो राजा व रानी अथवा न्यायाधीश वा उसकी स्त्री व्यभिचारादि कुकर्म करे तो उसको कौन दण्ड देवे?

उत्तर- सभा, अर्थात् उनको तो प्रजापुरुषों से भी अधिक दण्ड होना चाहिए।

प्रश्न- राजादि उन से दण्ड क्यों ग्रहण करेंगे?

उत्तर- राजा भी एक पुण्यात्मा भाग्यशाली मनुष्य है जब उसी को दण्ड न दिया जाये और वह ग्रहण न करे तो दूसरे मनुष्य उस दण्ड को क्यों मानेंगे? और जब सब प्रजा और प्रधान राज्याधिकारी और सभा धार्मिकता से दण्ड देना चाहें तो अकेला राजा क्या कर सकता है? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा प्रधान और सब समर्थ पुरुष अन्याय में ऊबकर न्याय धर्म को उबके सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जायें। न्याययुक्त दण्ड ही का नाम राजा और धर्म है जो उसका लोप करता है उससे नीच पुरुष दूसरा कौन होगा।

प्रश्न- यह कड़ा दण्ड होना उचित नहीं, क्योंकि मनुष्य किसी अंग का बनाने हारा या जिलाने वाला नहीं है, ऐसा

दण्ड नहीं देना चाहिए?

उत्तर– जो इसको कड़ा दण्ड जानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते, क्योंकि एक पुरुष को इस प्रकार दण्ड होने से सब बुरे लोग बुरे काम करने से अलग रहेंगे और बुरे काम को छोड़कर धर्म मार्ग में स्थित रहेंगे। मिलावट करने वालों के बारे में मनुस्मृति में कठिन दण्ड की व्यवस्था है:-

अबीजविक्रयी चैव बीजोत्कृष्टं तथैव च।
मर्यादाभेदकश्चैव विकृतं प्राप्नुयाद्वधम्।।

(मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक २९१)

अर्थात् न उगने वाले निस्सार (घटिया) अनाज बेचने वाले तथा निस्सार धान्य के साथ कुछ थोड़ा सा अच्छा धान मिलाकर बेचने वाले और ग्राम, नगर आदि सीमा के तोड़ने वाले के नाक-कान विद्रूप कर दिये जायें।

जुआ और शराब से सम्बन्धित विधान –

महर्षि मनु ने जुआ और शराब आदि से सम्बन्धित अपराधियों के लिए इस प्रकार विधान किया है-

कितवान्कुशीलवान्क्रूरान् पाखण्डस्थांश्च मानवान्।
विकर्मस्थाञ्छौण्डिकांश्च क्षिप्रं निर्वासयेत्पुरात्।।

मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक २२५ अर्थात् जुआरियों, असभ्य नाच गानों से जीविका करने वाले अत्याचारी आचरण वाले, पाखण्ड ढोंग आदि रचकर रहने वाले, शास्त्र विरुद्ध बुरे कर्म करने वाले, शराब बनाने बेचने वाले इन मनुष्यों को राजा राज्य से जल्दी से जल्दी बाहर निकाल दें।

इस प्रकार रिश्वत लेकर अन्याय करने वाले, निर्णयों में कपट करने वालों, ठीक निर्णय को किसी लालच व दबाव में आकर बदलने वालों, अमात्यों और न्यायधीशों को अन्याय करने पर ही दण्ड की व्यवस्था की गई है।

यदि यह कहा जाये कि मनुस्मृति एक ऐसा सर्वमान्य ग्रन्थ है जो जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक प्रकार के अपराध कानून दण्ड एवं जीवन शैली को उच्च ढंग से सिखाने का कार्य करती है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। परन्तु खेद की बात है कि कुछ स्वार्थी राजनैतिक लोग समाज के एक वर्ग विशेष, विशेषकर शूद्रों को मनु विरोधी घोषित करने का षड्यन्त्र रचते रहते हैं। उनके इस भ्रमपूर्ण विचार का मनुस्मृति भाष्यकार डॉ. सुरेन्द्र कुमार ने अपने ग्रन्थ 'महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर' के 'मनुस्मृति में शूद्रों की स्थिति' नामक अध्याय में स्पष्ट उल्लेख किया है कि जिस अपराध के लिए शूद्रों को जितने दण्ड की व्यवस्था की है, उच्च जाति के लोगों के लिए उस से कई गुणा अधिक दण्ड की व्यवस्था की है। जैसा कि मनुस्मृति के अध्याय संख्या ८ के श्लोक संख्या ३३७ तथा ३३८ में वर्णित है:-

अष्टापाद्यं तु शूद्रस्य स्तेये भवति किल्विषम्।
षोडशैव तु वैश्यस्य द्वात्रिंशत् क्षत्रियस्य च ।।
ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः, पूर्णं वाऽपि शतं भवेत्।
द्विगुणा वा चतुःषष्टिस्तद्दोषगुणविद्धि सः।।

अर्थात् किसी चोरी आदि के अपराध में शूद्र को आठ गुणा, वैश्य को सोलह गुणा, क्षत्रिय को बत्तीस गुणा और ब्राह्मण को चौसठ गुणा अपितु उसे सौगुणा अथवा एक सौ अठाईस गुणा दण्ड देना चाहिए।

इस प्रकार दण्ड की व्यवस्था देने पर भी कुछ स्वार्थी लोग मनुस्मृति जैसे पवित्र ग्रन्थ पर शूद्र-विरोधी होने का आरोप लगाते हैं। उन्हें सोचना चाहिए और अपनी मानसिकता में परिवर्तन करना चाहिए। कुछ लोग मनुस्मृतिकार पर यह भी आरोप लगाते हैं कि आज कानून की दृष्टि से सब समान हैं तो मनु की दण्ड व्यवस्था किसी को अधिक और किसी के कम दण्ड देने के कारण समाज में विषमता उत्पन्न होने की सम्भावना हो सकती है। इसका उत्तर देते हुए डॉ. सुरेन्द्र कुमार ने स्पष्ट किया है:- महर्षि मनु की दण्ड व्यवस्था आज की दण्ड और न्याय व्यवस्था से उत्तम, यथायोग्य और मनोवैज्ञानिक है। इसकी तुलना आज की दण्ड व्यवस्था से करके देखें तो अन्तर स्पष्ट हो जायेगा।

''आज की दण्ड व्यवस्था का सिद्धान्त है''- ''कानून की दृष्टि से सब समान हैं।'' पहला परस्पर विरोध यही हुआ कि पद स्तर और सामाजिक स्तर के अनुसार सुविधा एवं सम्मान व्यवस्था तो पृथक्-पृथक् है और दण्ड एक जैसा। इसे न्याय नहीं कहा जा सकता। उच्च पद और उच्च स्तर पर बैठा व्यक्ति अधिक बौद्धिक विवेक रखता है, अधिक सामाजिक सुविधाओं और सम्मान का उपयोग करता है। उसके द्वारा किये गये अपराध का दुष्प्रभाव भी उतना ही तीव्र एवं व्यापक होता है। इस आधार पर यथायोग्य दण्ड व्यवस्था यह कहती है कि उसे दण्ड भी अधिक मिलना चाहिए जैसा कि महर्षि मनु ने वर्णित किया है। अधिक सुविधा और अधिक सम्मान तो दण्ड कम क्यों?

दूसरा परस्पर विरोध यह है कि समान दण्ड का सिद्धान्त क्षमता (धन, पद, बल, प्रभाव) के दृष्टि से यथायोग्य दण्ड नहीं है। इसे भी न्याय नहीं माना जा सकता। इसे यूँ समझिए कि खेत चर जाने पर मेमने को भी डण्डा लगेगा, भैंस, हाथी और शेर को भी। इसका प्रभाव क्या

होगा? बेचारा मेमना डण्डे के प्रहार से मिमियने लगेगा, भैंसों में कुछ हलचल होगी, हाथी, शेर उल्टा मारने दौड़ेंगे। क्या यह वास्तव में समान दण्ड हुआ? नहीं, समान दण्ड तो वह है जो लोक व्यवहार में प्रचलित है। मेमने को डंडे से, भैंसे को लाठी से, हाथी को अंकुश से और शेर को हंटर से वश में किया जा सकता है। दूसरा उदाहरण लीजिए- एक अत्यन्त निर्धन व्यक्ति एक हजार के दण्ड को ऋण लेकर चुका पायेगा। मध्यवर्गीय थोड़ा कष्ट करके चुकायेगा, और समृद्ध सम्पन्न जूती की नोंक पर रख देगा। यह समान दण्ड नहीं है। उसी अमनोवैज्ञानिक दण्ड व्यवस्था का दुष्परिणाम है कि दण्ड की पतली रस्सी में आज निर्धन तो फंसे रहते हैं किन्तु धन-पद-सत्ता-सम्मान शक्तिशाली लोग उस रस्सी को तोड़ कर निकल भागते हैं। आंकड़े इकट्ठे करके देख लीजिए, स्वतन्त्रता के पश्चात् कितने निर्धनों को दण्डित किया गया है और कितने धन-पद-सत्ता-सम्पन्न जनों को। आर्थिक अपराधों में समृद्ध लोग अर्थदण्ड भरते रहते हैं और अपराध करते रहते हैं। मनु की यथायोग्य दण्ड व्यवस्था में ऐसा असन्तुलन और दोष नहीं है।

मनु की दण्डव्यवस्था अपराध की प्रकृति, अपराधी का पद और अपराध के प्रभाव पर निर्भर है। वे गंभीर अपराध में यदि कठोर दण्ड का विधान करते हैं। शूद्रों के लिए जो पक्षपात पूर्ण कठोर दण्डों का विधान मिलता है वह केवल प्रक्षिप्त श्लोकों में हैं और वे श्लोक मनुरचित नहीं है, बाद के लोगों द्वारा मिलाये गये है। जो सज्जन मनुस्मृति के वास्तविक स्वरूप को समझना चाहता है उन से निवेदन करना चाहूँगा कि वे डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी द्वारा सम्पादित विशुद्ध मनुस्मृति का अध्ययन करें तो उन के सब भ्रम मिट जायेंगे।

-४/४५, शिवाजी नगर, गुडगांव (हरियाणा)
मोबाईल- ०९९१११९७०७३

दक्षिण भारत में बलिदान परम्परा के पच्चहत्तर वर्ष

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी ऋषि के बलिदान समारोह के अवसर पर दक्षिण भारत में आर्य समाज का प्रचार-प्रसार करते हुए जिन हुतात्माओं ने अपने प्राणों का उत्सर्ग किया, उनका पुण्य स्मरण किया जायेगा।

दक्षिण भारत में निजाम के अत्याचारों की भट्टी में जो शहीद हुए उनमें प्रमुख हैं-

श्री भीमराव पटेल, माता गोदावरी देवी, श्री कृष्णराव विकेकर, श्री काशीनाथ धारूर, श्री गोविन्द राव घाडेलाली इन सभी को जिन्दा जलाया गया। अनेकों का जेल में बलिदान हुआ, इनमें भाई श्यामलाल जी, श्री धर्मप्रकाश जी, आर्यनेता पं. नरेन्द्र जी आदि प्रमुख थे, इन महानुभावों का इस अवसर पर पुण्य स्मरण किया जायेगा। परोपकारी में इन बलिदानियों के संस्मरण प्रकाशित होंगे।

सभी आर्यजनों से निवेदन है कि अपनी-अपनी समाजों में, आर्यसमाज के इतिहास व बलिदानी वीरों की साप्ताहिक सत्संग के अवसर पर चर्चा करें। अपने इतिहास बलिदानों का स्मरण रखने वाला समाज ही अपने को जीवित रख पाता है।

पृष्ठ संख्या २८ का शेष भाग.....
करने में उपयुक्त शरीर बन ही नहीं सकता है।

परमात्मा का ज्ञान से प्रत्यक्ष होता है। सृष्टि की अद्भुत रचना को देख कर उसके कर्ता का अनुमान होने में क्या संदेह हो सकता है।

जैसे जगत् में प्रत्यक्ष कोई भी काम बिना कर्त्ता के नहीं होता है वैसे ही इस महत्कार्य का कर्त्ता के बिना होना सर्वथा असम्भव है।

जैन मत में जीव का आकार

शरीर के समान माना जाता है अर्थात् हाथी के शरीर में हाथी के शरीर के समान बड़ा और चींटी के शरीर में चींटी के समान छोटा। हाथी वाला जीव चींटी के शरीर में जायेगा। तो उतना छोटा हो जाएगा अथवा सिकुड़ जायगा। और चींटी का जीव हाथी के शरीर में जायगा, तो फैलकर बड़ा हो जायेगा। जब तक आवागमन के बन्धन में रहेगा, तब तक इसी प्रकार फैलता सिकुड़ता रहेगा। जब जीव की मुक्ति हो जायेगी। तब फैलना सिकुडना बन्द हो जायेगा। यह कितने अज्ञान की बात है? यह सर्वथा बच्चों की सी बात है। फैलना सिकुड़ना विकार है और विकारवान पदार्थ नाशवान होता है।

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

पिछले अंक का शेष भाग.....

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
८८.	सौवर	५.००
८९.	पारिभाषिक	२०.००
९०.	धातुपाठ	
९१.	गणपाठ	२०.००
९२.	उणादिकोष	
९३.	निघण्टु	१५.००
९४.	संस्कृतवाक्यप्रबोध	
९५.	व्यवहारभानुः	१२.००
९६.	निरुक्त (मूल)	८०.००
९७.	अष्टाध्यायी (मूल)	२०.००
९८.	अष्टाध्यायीभाष्य प्रथम भाग सजिल्द	१२०.००
९९.	अष्टाध्यायी भाष्य द्वितीय भाग सजिल्द	१००.००
१००.	अष्टाध्यायी भाष्य तृतीय भाग सजिल्द	१३०.००

डॉ. भवानीलाल भारतीय

१०१.	महर्षि दयानन्द– आत्मकथा	
१०२.	उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन)	
१०३.	परोपकारिणी सभा का इतिहास	
१०४.	आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार	१०.००
१०५.	आर्य नरेश राजाधिराज सर नाहरसिंह वर्मा	८.००
१०६.	दयानन्द–सूक्ति–मुक्तावली	१५.००
१०७.	देशभक्त कुँ.चाँदकरण शारदा	५.००
१०८.	दयानन्द वचनामृत	३.००
१०९.	आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी	१०.००

वेदगोष्ठी– सम्पादक डॉ. धर्मवीर

११०.	ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	२०.००
१११.	वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग	३१.००
११२.	अथर्ववेदः समस्याएं और समाधान	३५.००
११३.	वेद और विदेशी विद्वान् – कृतित्व और दृष्टिभेद	३५.००
११४.	वेदों के आख्यान (प्रथम भाग)	३५.००
११५.	वेदों के दार्शनिक विचार	४०.००
११६.	सोम का वैदिक स्वरुप	५०.००
११७.	पर्यावरण का वैदिक स्वरुप	
११८.	वेद और समाज	
११९.	वेद और राष्ट्र	
१२०.	वेद और विज्ञान	
१२१.	वेद और ज्योतिष	८०.००
१२२.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–१)	५०.००
१२३.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–२)	५०.००
१२४.	वेद और निरुक्त	१००.००
१२५.	वेद और इतिहास	१००.००
१२६.	वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	१००.००
१२७.	वेद और शिल्प	
१२८.	वेदों में अध्यात्म	
१२९.	वेदों में राजनैतिक विचार	१००.००
१३०.	वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है	
१३१.	वैदिक समाज विज्ञान	
१३२.	सत्यार्थ प्रकाश ७वाँ समुल्लास और वेद	
१३३.	सत्यार्थ प्रकाश ८वाँ समुल्लास और वेद	

प्रो. धर्मवीर

१३४.	आर्यसमाज और शोध	१५.००
१३५.	महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्र	

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	स्वामी विष्वङ् परिव्राजक	
१३६.	ध्यान योग एवं रोग निवारण	१५०.००
१३७.	योग	५०.००
१३८.	अष्टाङ्ग योग	२०.००
१३९.	समाधि	१००.००
	स्वामी अभयानन्द सरस्वती	
१४०.	प्राणायाम चिकित्सा	
	डॉ. सत्यदेव आर्य	
१४१.	वैदिक सन्ध्या मीमांसा	२५.००
१४२.	ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्रों का विवेचन	२५.००
१४३.	तन्मेमनःशिवसंकल्पमस्तु का वैज्ञानिक विवेचन	२५.००
	विरजानन्द दैवकरणि	
१४४.	प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत	८.००
१४५.	महाभारत युद्ध कब हुआ एवं अन्य रचनाएँ	५.००
	वैद्य पंडित ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	
१४६.	बूंदी शास्त्रार्थ	५.००
१४७.	वैदिक सूक्ति–सुमन	२५.००
	वैदिक साहित्य – विविध ग्रन्थ	
१४८.	दयानन्द ग्रन्थमाला तीन खंड का १ सेट	५५०.००
१४९.	आर्य समाज की मान्यताएं	२०.००
१५०.	मानव निर्माण के स्वर्ण सूत्र	१५.००
१५१.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका (सजिल्द)	२५.००
१५२.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका अजिल्द	१५.००
१५३.	ऋग्वेद का नमूना भाष्य (१मंत्र)	४.००
१५४.	ईशादिदशोपनिषद् (मूल)	१०.००
१५५.	वैदिक कोषः (निघण्टु मणिमाला)	२५.००
१५६.	सरस्वती की खोज एवं महाभारत युद्धकाल	१०.००
१५७.	दयानन्द दिव्य दर्शन	१२.००
१५८.	वृक्षों में जीवात्मा	१०.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१५९.	महर्षि दयानन्द जीवन और सन्देश	३.००
१६०.	महर्षि महिमा	२.००
१६१.	स्वामी दयानन्द चरितम्	१०.००
१६२.	ब्रह्माकुमारी मत खण्डन	८.००
१६३.	निरुक्तकार का ऐतिहासिक पक्ष	५.००
१६४.	मांसाहार– वैदिक धर्म एवं विज्ञान	१२.००
१६५.	नेपाली सत्यार्थ प्रकाश	२००.००
१६६.	परोपकारी विशेषांक	२५.००
१६७.	महर्षि दयानन्द के चित्र (एक प्रति)	५०.००
१६८.	संगठन सूक्त	२.००
१६९.	३१ दिवसीय टेबल कलेण्डर	१००.००
१७०.	प्यारा ऋषि	२५.००
१७१.	नककटा चोर	३०.००
१७२.	महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी	३५.००
१७३.	स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनके क्रान्तिकारी शिष्य	३५.००
१७४.	भगवान् को क्यों मानें ?	२५.००
१७५.	महर्षि दयानन्द ग्रन्थ परिचय	३०.००
१७६.	आर्यसमाज के संस्थापक, महान समाज सुधारक–महर्षि दयानन्द सरस्वती	२५.००
१७७.	शेख चिल्ली और लाल बुझक्कड़	२५.००
१७८.	नैति मंजूषा	९५०.००
१७९.	ऋग्वेदादि संदेश	३०.००
१८०.	त्याग की धरोहर	१००.००
	ध्यान योग एवं रोग निवारण (सी.डी.)	
	(स्वामी विष्वङ् परिव्राजक)	
१८१.	अष्टांग योग–१ (सी.डी.)	
१८२.	अष्टांग योग–२ (सी.डी.)	
१८३.	आसन (सी.डी.)	
१८४.	सूक्ष्म व्यायाम (सी.डी.)	

शेष भाग अगले अंक में.....

बौद्ध-जैन मत विवेचन

- पं. अमरसिंह ''आर्य पथिक''

अब से लगभग २५ सौ वर्ष पहिले रोहिणी नदी के किनारे कपिलवस्तु नामक नगरी के राजा शुद्धोधन के दो रानियाँ थीं। एक महामाया, दूसरी प्रजापती। पहली रानी महामाया से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम शाक्यसिंह गौतम रक्खा गया। बौद्ध लोग उसको ही सिद्धार्थ कहते हैं। वह युवावस्था में ही साधु हो गये और बुद्ध नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्हीं के चेलों ने उनके नाम पर बौद्ध मत चला दिया। बुद्ध का मत होने से इसका नाम बौद्धमत है पर इसका अर्थ इस प्रकार किया जाता है।

बुद्ध्या निवर्तते स बुद्धः

जो बात बुद्धि में आवे अर्थात् बुद्धि से सिद्ध हो उसको माने, जो बुद्धि में न आवे, उसको न माने वह बुद्ध है।

मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना

मनुष्य की बुद्धियाँ-मतियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। इसलिये थोड़े ही समय में बौद्धों में अनेक भेद हो गये। **महायान और हीनयान** ये दो भेद प्रसिद्ध ही हैं। कई ग्रन्थों में बौद्धों के १८ भेद बताये हैं, चार भेद ये प्रसिद्ध हैं- **१. माध्यमिक, २. योगाचार, ३. सौत्रान्तिक ४. वैभाषिक।** १ माध्यमिक सब कुछ शून्य ही मानता है, वह जितने पदार्थ देखे और कहे जाते हैं, वह सब शून्य ही शून्य है। प्रत्येक पदार्थ उत्पत्ति से पूर्व नहीं था विध्वंस के पश्चात् न रहेगा, शून्य था, शून्य हो जायेगा। मध्य में जो दीखता है वह भी दूसरी वस्तु पर दृष्टि और ध्यान जाते ही शून्य हो जाता है और जो कुछ दीखता है वह स्वप्नवत् ही दीखता है।

माध्यमिक - का यह भारी भ्रम है। जो सब शून्य हो तो शून्य का देखने वाला जानने वाला भी शून्य ही होगा क्या? यदि वह भी शून्य होगा तो वह कैसे किसी को देखेगा और कैसे जानेगा? और शून्य को भी कोई कैसे देखेगा? अतः सिद्ध है कि सब शून्य मानना बुद्धिमत्ता नहीं है, ज्ञाता और ज्ञेय दो पदार्थ स्पष्ट सिद्ध हैं।

योगाचार- केवल ज्ञान को मानता है और बाहर की वस्तुओं को नहीं मानता। वह कहता है कि-वस्तु ज्ञान में तो है पर बाहर नहीं है। जैसे वस्तु न होने पर भी स्वप्न में दिखाई देती है। इसी संसार में सब कुछ न होते हुए भी दिखाई देता है।

यह मन्तव्य भी सर्वथा मिथ्या है। स्वप्न में भी वह ही वस्तु दिखाई देती है, जो वास्तविक रूप में कभी न कभी और कहीं न कहीं देखी हो, इसी कारण जन्मान्ध को रूप का स्वप्न कभी नहीं आता है। क्योंकि वास्तविक रूप उसने कभी देखा ही नहीं। स्वप्न और जाग्रत में क्रम का भेद तो हो जाना सम्भव है। जाग्रत में सब कुछ क्रमबद्ध देखा गया और स्वप्न में कभी कुछ दिखाई देने लगा और कभी कुछ। कभी कहीं और कभी कहीं। इसलिए स्वप्न का दृष्टान्त विषम है और उनके मन्तव्य का खण्डन ही करता है और जो योगाचार बाह्य शून्य मानता है तो जो पर्वत बाहर न होता हुआ इसलिए दिखाई देता है कि भीतर ज्ञान में है तो वह पर्वत जो बाहर दिखाई देता है वह भीतर होना चाहिए यदि कहें कि-भीतर है, तो भीतर इतना स्थान, इतना अवकाश कहाँ है, जिसमें पर्वत समा सके। यदि कहें कि भीतर भी पर्वत नहीं है पर्वत का ज्ञान ही है तो भ्रम हुआ। भ्रम भी उसी का होता है। जो वस्तु कभी कहीं देखी हो, बिना देखी का भ्रम भी नहीं होता है। जो वस्तु बाहर भी नहीं और भीतर भी नहीं, उसके लिए तीसरा स्थान बताना चहिए और यदि न बाहर है, न भीतर, न कहीं अन्यत्र फिर भी वह भीतर दिखाई देती है तो उसका ज्ञान भी मिथ्या, उसका दिखाई देना भी मिथ्या और योगाचार का यह मन्तव्य भी सर्वथा मिथ्या है।

सौत्रान्तिक - बाहर वस्तु का अनुमान मानता है। वह कहता है कि-बाहर कोई पदार्थ साङ्गोपाङ्ग पूरा दिखाई नहीं देता है। किन्तु पदार्थ के देश वा एक अङ्ग का प्रत्यक्ष होने से शेष का अनुमान कर लिया जाता है।

यह भी सर्वथा मिथ्या कल्पना है, क्योंकि-प्रत्यक्ष का अर्थ ही पदार्थ का साङ्गोपाङ्ग दीखना है। इन्द्रियों और इन्द्रियार्थों के सन्निकर्ष अर्थात् निकट सम्बन्ध से अव्यपदेश्य= संज्ञा का नहीं संज्ञी का अव्यभिचारी = सन्देह रहित व्यवसायात्मक = निश्चयात्मक ज्ञान का नाम ही प्रत्यक्ष है और यहाँ जो सन्निकर्ष अर्थात् सम्बन्ध कहा है, वह छः प्रकार का होता है-१. संयोग, २. संयुक्त समवाय, ३. संयुक्तसमवेत समवाय, ४. समवाय, ५. समवेत समवाय, ६. विशेषण विशेष्य भाव। विस्तार भय से इनकी व्याख्या यहाँ नहीं करते हैं। इनके होने पर पदार्थ का पूरा ज्ञान होता है। अतः स्पष्ट है कि यह सौत्रान्तिक मत भी अज्ञान पर ही

आधारित है।

वैभाषिक- इसका मत है कि-बाह्य पदार्थ है, बाहर ही पदार्थ दिखाई देते हैं, भीतर नहीं, जैसे उदई वैसे भान: उनके चुटिया न उनके कान,

बौद्ध मत के मूल सिद्धान्त-

क्षणिकं क्षणिकं, दु:खं दु:खं, स्वलक्षणं स्वलक्षणं, शून्यं शून्यम्।

इन चारों भावनाओं को चारों प्रकार के बौद्ध मानते हैं।

क्षणिकवाद- प्रत्येक पदार्थ क्षण-क्षण में बदलता है। जो पदार्थ इस क्षण में है, वह दूसरे क्षण में वैसा नहीं रहेगा आदि।

यदि पदार्थ क्षणिक है तो उसका ज्ञान भी क्षणिक होने से प्रत्यभिज्ञा नहीं रहेगी अर्थात् किसी को कोई बात कह कर कोई काम करके यह स्मरण नहीं होना चाहिए कि- मैंने यह बात कही थी या वह काम किया था। क्योंकि पदार्थ भी क्षण-क्षण में और हो जाता है। बात कहने या काम करने वाला व्यक्ति भी क्षण में कुछ का कुछ हो जाता है और ज्ञान भी क्षण-क्षण में बदलता है, तो फिर स्मरण कैसे रह सकता है?

एक बौद्ध ने किसी बौद्ध की हत्या कर दी। न्यायाधीश भी बौद्ध था। न्यायाधीश ने पूछा कि तुमने अमुक व्यक्ति की हत्या की, उसने कहा-कदापि नहीं की। न्यायाधीश ने कहा कि कुछ लोग साक्षी देते हैं कि हमारे सन्मुख उसने हत्या की। अभियुक्त ने कहा कि- न्यायाधीश महोदय! मैं बौद्ध हूँ, आप भी बौद्ध हैं। जिसको मारा बताया जाता है, वह भी बौद्ध था। जो साक्षी देते हैं वह भी बौद्ध हैं। हमारा सिद्धान्त है कि-प्रत्येक पदार्थ क्षण-क्षण में परिवर्तित होता है। इसलिये न मैं अब रहा हूँ, न साक्षी वह रहे हैं। सब कुछ परिवर्तित हो गया। यदि मैंने किसी को किसी समय मारा होगा तो उस समय मैं और रहा हूँगा। इस समय और हूँ और साक्षी भी और रहे होंगे, इस समय और हैं। यदि इनकी साक्षी इस समय मानी जायेगी तो अन्य के देखे हुए का अन्य साक्षी होगा और यदि मैं मृत्यु दण्ड का भागी हुँगा तो अन्य के किए के अपराध का अन्य को फल भोगना पड़ेगा। जो कदापि न्यायानुकूल नहीं। सोचिये क्षणिकवाद को मानने वाला न्यायाधीश किसी को किस प्रकार दण्ड दे सकता है।

दु:खवाद- सब संसार दु:ख ही दु:ख है और सुख कुछ नहीं, तो सुख की अपेक्षा के बिना दु:ख की सिद्धि हो ही नहीं सकती है। जैसे रात्रि की अपेक्षा से दिन और दिन की अपेक्षा से रात्रि होती है। इसी तरह दु:ख की अपेक्षा से सुख और सुख की अपेक्षा से दु:ख होता है। अकेला दु:ख ही मानना ठीक नहीं।

यदि सब संसार दु:ख रूप होता तो किसी की इसमें (सुख) प्रवृत्ति ही न होती। संसार में जीवों की प्रवृत्ति प्रत्यक्ष दिखलाई देती है। इसलिए संसार केवल दु:ख रूप नहीं हो सकता। इसमें सुख-दु:ख दोनों ही हैं।

और बौद्ध लोग इसमें दु:ख ही दु:ख मानते हैं तो खान-पानादि करना और पथ्य तथा औषध्यादि सेवन करके शरीर रक्षण करने में प्रवृत्त होकर सुख क्यों मानते हैं? यदि कहें कि-हम प्रवृत्त तो होते हैं। परन्तु इसको दु:ख ही मानते हैं। तो यह कथन ही सम्भव नहीं क्योंकि-जीव सुख जानकर प्रवृत्त और दु:ख जानकर निवृत्त होता है। संसार में धर्म-क्रिया, विद्या सत्संग आदि सब श्रेष्ठ व्यवहार सुखकारक हैं। इनको बौद्धों के अतिरिक्त कोई भी विद्वान् और बुद्धिमान् मनुष्य दु:ख का लिङ्ग नहीं मान सकता।

बौद्धों की द्वादशायतन पूजा-

अर्थानुपार्ज्य बहुशो द्वादशायतनानि वै।
परित: पूजनीयानि किमन्वैरिह पूजित:।
ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चैव तथा कर्मेन्द्रियाणि च।
मनो बुद्धिरिति प्रोक्त द्वादशायतनं बुधै:।
द्वादशायतनपूजा श्रेयस्करीति बौद्धनये।।

- बौद्धदर्शन

द्वादशायतन पूजा मोक्ष को देने वाली है, उस पूजा के लिए बहुत से धनादि पदार्थों को संग्रह करके द्वादशायतन पूजा अर्थात् शरीर में बारह वस्तुओं की सब प्रकार से पूजा करनी चाहिये। अन्य की पूजा करने से क्या प्रयोजन?

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ-कान, त्वचा, आंख, जीभ और नाक। पाँच कर्मेन्द्रियाँ- वाणी, हाथ, पांव, गुदा और उपस्थ। ये दश इन्द्रियाँ। मन और बुद्धि, इन बारह की पूजा अर्थात् इनको आनन्द में प्रवृत्त रखना यह द्वादशायतन पूजा है। जब इन्द्रियों और अन्त:करण की पूजा भी मोक्ष देने वाली है तो इन बौद्धों और विषयी जनों में क्या भेद रहा? जो इनसे बौद्ध नहीं बच सके तो वहाँ मुक्ति भी कहाँ रही? जहाँ ऐसी बातें हैं, वहाँ मुक्ति का क्या काम?

सृष्टिकर्त्ता कोई नहीं- इस विषय में जैन मत के पीछे लिखा जायगा, क्योंकि-चार्वाक्, बौद्ध और जैन तीनों नास्तिक, इस विषय में एक मत हैं अत: तीनों का वर्णन पूरा होने पर इस विषय पर थोड़ा सा लिखेंगे।

मोक्ष का लक्षण- सौत्रान्तिक, वैभाषिक और योगाचार तीनों मुक्ति के विषय में यह मानते हैं कि-राग-द्वेषादि जो वासनाएँ हैं इनसे चित्त चारों ओर से जलता रहता है। इन वासनाओं का उच्छेद ही निर्वाण अर्थात् बुझ जाना है। न कि विज्ञान की धारा का बुझना। माध्यमिक मानता है कि- विज्ञान की धारा भी बुझ जाती है। (विज्ञान की धारा ही आत्मा है) यह मुक्ति क्या? यह तो पानी में डूब मरने या आत्मघात कर लेने के समान है।

वैदिक धर्म में तो मुक्ति का स्वरूप-मिथ्या ज्ञान, दोष, प्रवृत्ति, जन्म और दु:ख का क्रमश: नाश होकर परब्रह्म की प्राप्ति के साथ परमानन्द का प्राप्त होना है।

जैन सम्प्रदाय

तीनों नास्तिक सम्प्रदायों के तीन दर्शन पृथक्-पृथक् हैं। चार्वाकों का चार्वाक् दर्शन, बौद्धों का बौद्धदर्शन और जैनों का आर्हत दर्शन। आर्हत दर्शन प्रवर्त्तक ऋषभदेव को माना जाता है। वह कब हुए, यह कोई जैन नहीं जानता है। महावीर स्वामी से पहिले ऋषभदेव सहित २३ तीर्थङ्करों और जैनियों में माने जाते हैं। २४ वें महावीर स्वामी कहे जाते हैं। इनका ही उत्पत्तिकाल ज्ञात है इनको २६सौ वर्ष हुए हैं, पहिले २३ का किसी को कुछ पता नहीं।

जैनी लोग जैनमत को अनादि काल से चला आया मानते हैं। पर वास्तविकता यह है कि जैनमत बहुत नवीन है और यह बौद्धमत में से ही निकला है। इस नवीन मत को अति प्राचीन बताने के लिये ही २३ तीर्थङ्करों के कल्पित नाम इनके साथ जोड़कर पानी में खोज दे दिया गया है।

आरम्भ में बुद्ध ही को जिन और जिन ही को बुद्ध कहा गया था। इसलिये बौद्ध और जैन एक ही सम्प्रदाय के दो नाम थे। पीछे दोनों नामों पर पृथक् पृथक् आग्रह होने से दोनों पृथक् पृथक् सम्प्रदाय कहलाने लगे। इन दोनों में भी अनेकानेक अवान्तर भेद हो गये। जैसे बौद्धों में १८ और इनसे भी अधिक भेद बौद्धों ने स्वयं स्वीकार किए हैं। इसी प्रकार जैनियों में भी दिगम्बर और श्वेताम्बर दो प्रसिद्ध पृथक्-पृथक् मार्ग बन गये। जिनके साधु सर्वथा नंगे रहते हैं, शरीर पर एक अंगुल भी वस्त्र नहीं रखते हैं, वह दिगम्बर कहाते हैं। अम्बर नाम वस्त्र का है। चारों दिशाएँ ही जिनका वस्त्र हैं और वस्त्र कोई नहीं, वह दिगम्बर और जिन के साधु श्वेत वस्त्र पहनते हैं, और मुँह पर पट्टी बान्धते हैं, वह श्वेताम्बर कहलाते हैं। उन्हीं में एक भेद अब तेरापन्थी और हो गया है।

जैनियों के दर्शनसार नामक ग्रन्थ में लिखा है कि - विक्रमादित्य की मृत्यु के १३६ वर्ष पश्चात् सौराष्ट्र (गुजरात) में श्वेताम्बर सम्प्रदाय उत्पन्न हुआ।

भाष्यचूर्णि में दिगम्बर मत की उत्पत्ति महावीर स्वामी के ६०९ वर्ष पीछे बताई है। इस प्रकार दोनों की उत्पत्ति को अभी पूरे दो सहस्र वर्ष नहीं हुए हैं।

जैन दर्शन एक शब्दाडम्बर ही है, यह आगे चल कर पता लगेगा। इसमें ५ अस्तिकाय माने गये हैं-१ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ पुद्गलास्तिकाय, ५ जीवास्तिकाय। छठा-काल इसको अस्तिकाय नहीं कहते। अस्ति=है, काय=शरीर वा शरीर के समान।

मनुष्य के भीतर धार्मिक संस्कार और बाहर धर्माचरण तथा शास्त्र में प्रवृत्ति 'धर्मास्तिकाय' है। ऊपर जाने और उन्नति करने की प्रवृत्ति वाला जीव शरीरादि के बन्धन में है। इससे अनुमान होता है कि-भीतर और बाहर कुप्रवृत्ति है, इसी का नाम अधर्मास्तिकाय है। जिसमें आना-जाना और रहना होता है, वह 'आकाशास्तिकाय' है। वह दो प्रकार का है। एक 'लोकाकाश' पृथिवी द्यौ के मध्यम का आकाश जिसमें लोक है। और दूसरा 'अलोकाकाश' जिसमें कोई लोक नहीं, वह ऊपर का आकाश है। मुक्त जीव उसी में रहते हैं। वह मोक्ष स्थान है। चौथा 'पुद्गलास्तिकाय' जो कारण रूप सूक्ष्म नित्य एकरस वर्ण गन्ध वाला द्विस्पर्श वाला कार्य का लिङ्गी पूरने और गलने स्वभाव वाला होता है। वह छ: प्रकार का है। पृथिवी, जल, तेज, (अग्नि) और वायु ये चारों भूत और स्थावर (न चलने वाले वृक्षादि) और जंगम (चलने वाले) मनुष्यादि के शरीर, यह सब 'पुद्गलास्तिकाय' है। पाँचवाँ 'जीवास्तिकाय' है। जो चेतना लक्षण ज्ञानदर्शन में उपयुक्त अनन्त पर्यायों से परिणामी होने वाला कर्त्ता भोक्ता है। यह 'जीवास्तिकाय' तीन प्रकार का है- १. बद्धजीव, २. मुक्तजीव, ३. नित्यमुक्त जीव। नित्यमुक्त एक ही हैं। वह अर्हन मुनि (ऋषभदेव) हैं। उनके नाम पर 'आर्हतदर्शन' है। अर्हन्= पूज्य, साधारण भाषा में 'अर्हन्त' और प्राकृत में 'अरिहन्त'=काम क्रोधादि आन्तरिक शत्रुओं के मारने वाले, कहीं-कहीं 'अरुहन्त' भी पढ़ा गया है अर्थात् फिर न उगने=जन्म न लेने वाला है। दूसरे मुक्त जीव जो ऋषभदेव को छोड़कर महावीर स्वामी तक २३ तीर्थङ्कर हैं। ये सब मुक्त हो गये और ये सब ही जैनियों के परमेश्वर हैं। तीसरे बद्धजीव जो जन्म लेते और मरते हैं। यह दो प्रकार के हैं- एक 'अमनस्क' मन रहित स्थावर वृक्षादि और दूसरे 'समनस्क' मन सहित मनुष्य, पशु आदि। ये पाँच 'अस्तिकाय' हैं। छठा-काल है वह

'अस्तिकाय' नहीं है। इन पाँचों अस्तिकायों की नवीनता, प्राचीनता, परत्व, अपरत्व बताने वाला है।

जैनियों का इन अस्तिकायों का मानना ठीक नहीं, क्योंकि-धर्म और अधर्म द्रव्य नहीं, किन्तु गुण हैं, अत: यह दोनों जीवास्तिकाय में आ जाते हैं। इसलिए आकाश, परमाणु, जीव और काल मानते तो ठीक था। और जो ९ नव द्रव्य वैशेषिक में माने हैं, वे ही ठीक हैं। क्योंकि-पृथिव्यादि पाँच तत्त्व, काल, दिशा, आत्मा और मन के ये नौ पृथक्-पृथक् पदार्थ निश्चित हैं। एक जीव को चेतन मानकर ईश्वर को न मानना यह जैन बौद्धों की मिथ्या पक्षपात की बात है।

जैनियों का गोरखधन्धा सप्तभङ्गीन्याय

(१) स्यादस्ति (२) स्यान्नास्ति, (३) स्यादस्ति च नास्ति च (४) स्यादवक्तव्य:, (५) स्यादस्ति चावक्तव्यश्च, (६) स्यान्नास्ति चावक्तव्यश्च, (७) स्यादस्ति च नास्ति च वक्तव्यश्च। ये सात भङ्ग हैं। यहाँ स्यात् का अर्थ-कथञ्चित् है। उर्दू फारसी का शब्द 'शायद' भी इसी का रूपान्तर वा द्योतक प्रतीत होता है।

घट व पट किसी वस्तु का अस्तित्व कहना ही तो 'स्यादस्ति' यह पहला भङ्ग है, कथञ्चित् यह घट है।

यह पहला घट नहीं, अथवा यह दूसरा घट नहीं। किसी प्रकार प्राप्यत्वादी रूप से उसका निषेध कहना हो तो 'स्यान्नास्ति' कथञ्चित् यह घट नहीं है, यह दूसरा भङ्ग है।

जब अस्तित्व और नास्तित्व दोनों को कहना हो तो 'स्यादस्ति च नास्ति च' 'स्यात् है स्यात् नहीं है' यह तीसरा भङ्ग है।

होना और न होना, दोनों का कहना अशक्य हो तो 'स्यादवक्तव्य:' स्यात् न कहने योग्य है। अर्थात् अनिर्वचनीय है, यह चौथा भङ्ग है। पहला और चौथा भङ्ग एक साथ कहना हो तो 'स्यादस्ति चावक्तव्यश्च' स्यात् है और अवक्तव्य है। यह पाँचवाँ भङ्ग है।

दूसरा और चौथा भङ्ग एक साथ कहना हो तो, 'स्यान्नास्ति चावक्तव्यश्च' कथञ्चित् नहीं है। यह भी अवक्तव्य=न कहने योग्य है। यह छठा भङ्ग है। तीसरा और चौथा एक साथ कहना हो। 'स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यश्च' स्यात् है, और स्यात् नहीं है। और यह अवक्तव्य है तो यह सातवाँ भङ्ग है।'

यह जैनियों का सप्तभङ्गीन्याय जैनियों का बनाया हुआ वाग्जाल, और शब्दाडम्बर ही है, और कुछ नहीं। यह सब एक अन्योऽन्याभाव में साधर्म्य वैधर्म्य में चरितार्थ हो सकता है।

न्याय दर्शन में चार प्रकार के अभाव कहे हैं। उनमें एक अन्योन्याभाव भी है। गौ-गौ तो है, पर वह घोड़ा नहीं है। 'गौ' में घोड़ापन का अभाव है। इसी प्रकार घोड़ा में गोपन का अभाव है। इसका नाम 'अन्योऽन्याभाव' है।

किन्हीं दो अथवा दो से अधिक वस्तुओं में कुछ गुण-कर्म-स्वभाव आकृति समान हों तो उसको 'साधर्म्य' कहते हैं और असमानता हो उसको वैधर्म्य कहा जाता है, जैसे गौ के भी चार पैर हैं और घोड़े के भी। 'गौ' के भी पूँछ होती है, और घोड़ें के भी। यह दोनों में समानता या साधर्म्य है और गौ के सींग होते हैं, घोड़े के नहीं, यह दोनों में असमानता या वैधर्म्य है।

देखो। जीव का अजीव में और अजीव का जीव में अभाव रहता ही है। जैसे जीव और जड़ प्रकृति के वर्तमान रहने से दोनों में 'सत्ता' का साधर्म्य है, और जीव के चेतन और प्रकृति के अचेतन जड़ होने से वैधर्म्य है। प्रकृति में चेतनत्त्व नहीं है और जीव में जड़त्व नहीं है। इस प्रकार विचार करने से सप्तभङ्गी और स्याद्वाद का गोरखधन्धा, सब व्यर्थ हो जाता है।

इस सरल प्रकरण को छोड़कर कठिन जाल रचना केवल अज्ञानियों को फँसाने के लिए होता है।

बौद्ध और जैन आरम्भ में एक ही थे। यह जैन परम्परा के ही प्रसिद्ध राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द में अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'इतिहास तिमिर नाशक' में लिखा है और संस्कृत के प्रसिद्ध कोष 'अमरकोष' में अमरसिंह पण्डित जो जैन था, उसने अमरकोष प्रथम काण्ड स्वर्ग वर्ग के श्लोक १३-१४-१५, में कहा है कि बुद्ध और जिन दोनों नाम एक शाक्यसिंह गौतम के हैं। बुद्ध से बौद्ध और जिन से जैन दोनों नाम एक ही सम्प्रदाय के हैं, यह स्पष्ट है।

ईश्वर और सृष्टि कर्त्तृत्व

चार्वाक्, बौद्ध और जैन तीनों ही किसी को सृष्टि कर्त्ता नहीं मानते हैं। जैन अपने २४ तर्थङ्करों को ईश्वर कहते हैं। पर सृष्टि कर्ता उनको भी नहीं मानते हैं। उनका कहना है कि-सृष्टि का बनाने वाला कोई नहीं है। यह चारों तत्त्वों के संयोग=वियोग से स्वयं ही बनती और बिगड़ती रहती हैं।

जो अनादि ईश्वर न होता तो 'अर्हन देव' के माता-पिता आदि के शरीर का साँचा कौन बनाता। बिना संयोगकर्ता के यथायोग्य सर्वावयव सम्पन्न यथोचित कार्य

शेष भाग पृष्ठ संख्या २२ पर

।।ओ३म्।।

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१३१ वाँ ऋषि बलिदान समारोह
❁ कार्यक्रम ❁

शुक्रवार, दिनांक ३१ अक्टूबर, २०१४

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा –डॉ. वागीश

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **ध्वजारोहण व उद्घाटन सत्र**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन, विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **दक्षिण भारत में बलिदान परम्परा, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ, सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **महर्षि दयानन्द–एक राष्ट्र पुरुष, भजन–प्रवचन–सम्मान**

शनिवार, दिनांक १ नवम्बर, २०१४

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा – डॉ. वागीश

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **आतंकवाद व भ्रष्टाचार का कारण, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **वर्तमान में आर्यसमाज की कार्य प्रणाली, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **म.द. आर्ष गुरुकुल–स्नातक सत्र, भजन–प्रवचन–सम्मान**

रविवार, दिनांक २ नवम्बर, २०१४

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.३० तक – यज्ञ, वेदपाठ, **पूर्णाहुति**, ब्रह्मा–डॉ. वागीश

०९.३० से १०.०० तक – वेद प्रवचन

१०.०० से १०.३० तक – प्रातराश

१०.३० से १२.३० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **आर्य युवक सम्मेलन, भजन एवं प्रवचन**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **धन्यवाद व समापन सत्र**

वेद–गोष्ठी

विषय : **भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद**

स्थान : **ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर**

३१ अक्टूबर : उद्घाटन सत्र – ११.०० से १२.३० तक

: द्वितीय सत्र – १४.३० से १७.०० तक

१ नवम्बर : तृतीय सत्र – १०.०० से १२.३० तक

: चतुर्थ सत्र – १४.३० से १७.०० तक

२ नवम्बर : समापन सत्र

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१३१ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

दिनांक ३१ अक्टूबर तथा १-२ नवम्बर, शुक्र, शनि, रविवार

महापुरुषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है। जिस कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है - महापुरुषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार-प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३१वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ - २७ अक्टूबर से 'ऋग्वेद पारायण यज्ञ' का आरम्भ किया जायेगा, इस यज्ञ की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन २ नवम्बर को होगी। यज्ञ के **ब्रह्मा डॉ. वागीश, मुम्बई** होंगे। यह यज्ञ ऋषि-उद्यान, अजमेर की यज्ञशाला में होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तरराष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया गया है। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है-**भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद**। जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १५ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। ३१ अक्टूबर, १-२ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता - प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गतवर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। ३१ अक्टूबर को परीक्षा एवं १ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १५ अक्टूबर, २०१४ तक 'आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि-उद्यान, अजमेर' इस पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान-समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

अक्टूबर के आरम्भ में अजमेर में हलकी ठंड होने लगती है, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें।

सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके।

सभी से निवेदन है कि १३१ वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान्-आचार्य बलदेव जी, प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु जी-अबोहर, आचार्य विजयपाल जी-झज्जर, स्वामी ऋतस्पति जी, डॉ. ब्रह्ममुनि जी-महाराष्ट्र, डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी-गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार, डॉ. वेदपाल जी-बड़ौत, आचार्या सूर्या देवी जी-शिवगंज, डॉ. राजेन्द्र जी विद्यालंकार, डॉ. रामप्रकाश जी, सत्येन्द्रसिंह जी-मेरठ, डॉ. कृष्णपालसिंह जी-जयपुर, श्री सत्यानन्द आर्य-दिल्ली, श्री राजवीर जी-मुरादाबाद, श्री जगदीश जी शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार जी चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव जी आर्य-राजकोट, श्री प्रकाश जी आर्य-महू, श्री सत्यपाल जी पथिक, पं. भूपेन्द्र सिंह जी आदि।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

गजानन्द आर्य	धर्मवीर	ओम मुनि
प्रधान	कार्यकारी प्रधान	मन्त्री

संस्था - समाचार

१ से १५ अक्टूबर २०१४

१. यज्ञ एवं प्रवचन- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान, आर्यजगत् के उन स्थलों में से है, जहाँ पूरे वर्ष प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ का अनुष्ठान अपरिहार्य रूप से किया जाता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्दकृत भाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। दोनों समय प्रवचन, स्वाध्याय आदि की व्यवस्था है इन प्रवचन, स्वाध्याय के क्रम में वेद मन्त्रों तथा ऋषिकृत ग्रन्थों पर क्रमश: विचार किया जाता है। वेदमन्त्रों के अन्तर्गत ऋग्वेद के अग्नि, इन्द्र, वरुण, मरुत्, रुद्र, उषा, विष्णु, सोम, अश्विनौ, सविता, बृहस्पति आदि देवता विषयक सूक्तों पर, विश्वामित्र-नदी संवाद (३/३३), यम-यमी संवाद (१०/१०), पुरुरवा-उर्वशी संवाद (१०-९५), सरमा-पाणि संवाद (१०/१०८), 'अस्य वामस्य' सूक्त (१/१६४), मृत्यु सूक्त (१०/१८), अक्ष सूक्त (१०/३४), ज्ञान सूक्त (१०/७१), पुरुष सूक्त (१०/९०), हिरण्यगर्भ सूक्त (१०/१२१), वाक् सूक्त (१०/१२५), नासदीय सूक्त (१०/१२९), श्रद्धा सूक्त (१०/१५०), स्त्री सूक्त (१०/१५९), अघमर्षण सूक्त (१०/१९०) संगठन सूक्त (१०/१९१) इत्यादि सूक्तों पर, यजुर्वेद के ३१वें (पुरुषाध्याय),३२वें अध्याय, ३४वें अध्याय (शिवसंकल्प), ४०वें (ईशावस्यम्) आदि का, अथर्ववेद के मेधा सूक्त (१/१), राष्ट्रसभा सूक्त (३/४), शालानिर्माण सूक्त (३/१२), सांमनस्य सूक्त (३/३०) वर्षा सूक्त (४/१५), ब्रह्मचर्य सूक्त (११/५), उच्छिष्टब्रह्म सूक्त (११/७), भूमि सूक्त (१२/१) जैसे सूक्तों/मन्त्रों पर क्रमश: विचार किया जाता है, इसके साथ-साथ योगदर्शन, सत्यार्थप्रकाशादि ग्रन्थों का स्वाध्याय भी किया जाता है। अपने प्रात: कालीन प्रवचन के क्रम में **डॉ. धर्मवीर जी** ने अथर्ववेद के सांमनस्य सूक्त (३/३०) की व्याख्या प्रस्तुत की। प्रथम मन्त्र-

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि व:।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।

की चर्चा करते हुए आपने बताया कि यहाँ स्वयं ईश्वर कह रहा है कि हे मनुष्यो! तुम परस्पर प्रेमपूर्वक रहो, इसलिए स्वयं मैं तुम्हें सहृदय अविद्वेषी बनाता हूँ। वेद का यह मन्त्र कहता है कि हम मनुष्यों का स्वभाव ही एक-दूसरे के साथ अविद्वेषी बनकर (प्रेमपूर्वक) रहना है। यदि हम अपने इस स्वभाव के विपरीत आचरण करते हैं तो निश्चित ही हम दु:ख पायेंगे। जिस प्रकार गाय अपने नवजात बछड़े को जिस अतिशयता के साथ प्यार करती है और वात्सल्य के साथ अपनी ओर खींचती है उसी प्रकार हम सब मनुष्यों को भी एक-दूसरे से व्यवहार करना चाहिए।

अपने प्रवचन क्रम में **आचार्य सोमदेव जी** ने 'सङ्गे शक्ति: कलियुगे' की चर्चा करते हुए बताया कि कलियुग में संगठन में ही शक्ति होती है। अगर इस बात को स्वीकार न किया जाये तो भी ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त संगठन सूक्त स्पष्ट रूप से कहता है कि हम मनुष्यों को संगठित हो जाना चाहिए। संगठित होकर ही हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। पञ्चतन्त्र की एक कथा का उल्लेख करते हुए आपने बताया कि एक बीस तीस कबूतरों का समूह कहीं उड़ा जा रहा था। तभी समूह के एक युवा कबूतर को जमीन में दाना दिखाई दिया और उसने अपने साथियों को जमीन में चलकर दाना चुगने को कहा। इस बात पर एक बूढ़े कबूतर ने आपत्ति जताई कि- यहाँ आस-पास कोई बस्ती नहीं है, कोई खेत नहीं है तो तुम्हें दाना कहाँ से दिखाई दे रहा है? युवा कबूतर बोला- वह देखिये वहाँ उस ओर जमीन पर। पुन: उस बूढ़े कबूतर ने चेताया कि वहाँ जाना ठीक नहीं क्योंकि यह किसी शिकारी की चाल भी हो सकती है। लेकिन फिर भी युवा कबूतर के अत्यधिक आग्रह पर कबूतर की टोली दाना चुगने जमीन में उतरी और जैसा वृद्ध ने आशंका व्यक्त की थी सभी लोग शिकारी के जाल में फँस गये। अब समूह के सारे लोग उस युवा कबूतर को ताना देने लगे तो उस बूढ़े कबूतर ने कहा कि यह समय किसी को ताना देने का नहीं है। अभी तो हमको यहाँ से बचने का उपाय सोचना चाहिए। तो सभी ने कहा- आप ठीक कहते हो- आप ही बताइये कि हम क्या करें। बूढ़े ने कहा- एक युक्ति है यदि हम बस एक साथ उड़े तो हम इस जाल को भी अपने साथ लेकर जा सकते हैं। सारे समूह ने उस बूढ़े कबूतर की बात मानी एक साथ उड़कर उस जाल को भी अपने साथ उड़ाकर ले गये इस प्रकार उन्होंने अपनी जान बचायी। कबूतरों के सामान हम भी समूह में चलकर बड़ी से बड़ी विपत्ति को पार कर सकते हैं।

आचार्य सनत्कुमार जी ने अपने प्रवचन क्रम में

वैदिक जीवन विज्ञान की व्याख्या करते हुए बताया कि- प्राय: व्यक्ति अपने सामर्थ्य को स्वयं ही नहीं पहचान पाता है। अपने आपको सामर्थ्यहीन मानने की प्रवृत्ति कई बार आर्यों में भी देखने में आती है वस्तुत: ईश्वर ने मनुष्यों को विशेष कर आर्यों को असीम जैसा प्रतीत होने वाला सामर्थ्य दिया है जिसकी

अहं भूमिमददामार्याय, कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्,
कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहित:।

जैसे वेद वचन स्पष्ट घोषणा करते हैं कि वस्तुत: आर्य तो वह होता है जिससे निराशा भी निराश हो जाये कि यह व्यक्ति मुझे अपने पास आने क्यों नहीं देता।

स्वामी ध्रुवदेव जी ने लक्ष्य की चर्चा करते हुए बताया कि ईश्वर को जानना मनुष्यमात्र का लक्ष्य है लेकिन इस बड़े लक्ष्य को पाने के लिए छोटे-छोटे लक्ष्यों को भी पूर्ण करना होता है जैसे- विद्यार्थी काल में विद्या का अर्जन करना। विद्यार्थी को अपने इस लक्ष्य के साधकों और बाधकों को जानकर साधकों को ग्रहण करना चाहिए और बाधकों को दूर हटा देना चाहिए। धौम्य ऋषि के शिष्य आरुणि की कथा बताते हुए आपने वैदिक शिष्य का आदर्श बताया। **आचार्य सत्यव्रत जी** ने महर्षि के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश स्वाध्याय कराते हुए बताया कि आर्ष पद्धति से पढ़ने वाले विद्यार्थी जो शिक्षा, व्याकरण, निरुक्तादि के क्रम से पढ़ते हैं उन्हें भी महर्षि के ग्रन्थों का अध्ययन अपने पाठ्यक्रम की तरह ही निष्ठापूर्वक अध्ययन करना चाहिए।

अपने प्रवचन क्रम में **आचार्य देवप्रकाश जी** ने यज्ञीय प्रक्रियाओं की व्याख्या की। आचमन की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए बताया कि- **'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा:'** महर्षि याज्ञवल्क्य के इस वचनानुसार देव लोग ही यज्ञ करने के अधिकारी हैं। देव कौन है? **'सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्या:'** शतपथ के इस वचनानुसार मनुष्य और देव में यही अन्तर है कि देव सत्य से युक्त वाणी का ही व्यवहार करते हैं और मनुष्य असत्य से युक्त, सत्यासत्य से युक्त वाणी का प्रयोग करते हैं। यज्ञ करने के लिए मनुष्य को देवत्व प्राप्त करना अभीष्ट है। यह देवत्व सत्यव्रतादि नियमों से ही सम्भव है। इस प्रकार याज्ञीय आचमन के द्वारा अपने को मनुष्यत्व से देवत्व की ओर ले जाने का सङ्कल्प करता है।

ब्रह्मचारी वेद भूषण जी ने ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के १७०वें सूक्त के प्रथम मन्त्र -

न नूनमस्ति नो श्व: कस्तद्वैद यदद्भुतम्।
अन्यस्य चित्तमभि सञ्चरेण्यमुताधीतं वि नश्यति।।

की व्याख्या करते हुए बताया कि चञ्चल व्यक्ति के ऊपर विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि चञ्चलता के कारण उसके सङ्कल्प एक क्षण में बनते हैं और अगले ही क्षण नष्ट हो जाते हैं अपनी बात को पुष्ट करते हुए आपने निरुक्त की कथा का उद्धरण देते हुए बताया कि जब अगस्त्य ने इन्द्र देवता के लिए हवि देने का विचार किया किन्तु इन्द्र की उपलब्धता न होने के कारण उसने इस हवि को मरुद्गणों के लिए देने की इच्छा की अगस्त्य के इस सङ्कल्प परिवर्तन से इन्द्र ने अगस्त्य के पास आकर कहा कि - न नूनमस्ति- जो हवि मुझे आज नहीं मिली, नो श्व:- वह हवि कल मुझे मिलेगी ऐसी आशा कैसे की जा सकती है जब तुमने (अगस्त्य ने) मुझे हवि देने का संकल्प किया, तो मुझ इन्द्र को तुम्हारे संकल्प मात्र से प्रसन्न होकर उस हवि को अपना नहीं समझना चाहिए था, क्योंकि अब जब तुम चञ्चल मन वाले अगस्त्य ने उस हवि को किसी और को दे दिया तो मुझे दु:ख हो रहा है। इससे हमें यह शिक्षा लेनी चाहिए कि - अपनी प्रसन्नता के लिए हमें दूसरों पर आश्रित नहीं रहना चाहिए क्योंकि कई बार हम सुख के भागी होने पर भी दूसरों के विशेषकर अजागरूक लोगों के कारण दु:ख प्राप्त कर जाते हैं।

योग साधना शिविर- आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति उपलब्ध नहीं हो पा रही है इसका कारण है कि साधना के विषय साध्य, साधन, साधक वा अन्य साधकों बाधकों के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। अत: महर्षि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा अपने मुख्य परिसर ऋषि उद्यान में वर्षों से योग्य आचार्यों द्वारा योग साधना शिविरों का आयोजन करती आ रही है। इन शिविरों में साधना के विषयों का वैदिक दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जाता है, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान कराके, आत्मनिरीक्षण द्वारा आत्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया जाता है।

विगत वर्षों से इन शिविरों में नवीन पाठ्यक्रम अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है। इस पाठ्यक्रम के अन्तरगत प्रथम, द्वितीय, तृतीय वा चतुर्थ

शेष भाग पृष्ठ संख्या ३५ पर.....

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम–**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या–**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम–**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने,
जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या–**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन–जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए 'आस्था–भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग–यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था–भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था–भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद–प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के उपनिषद् प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था–भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था–भजन' (चैनल) डिश–टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा–स्काई, वीडियोकोन, बिग–टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार–बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक–धर्म के प्रचार–प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० सितम्बर २०१४ तक)

१. श्री देवमुनि, अजमेर २. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ३. श्रीमती उषा आर्या, अजमेर ४. श्री विजयसिंह गहलोत, अजमेर ५. श्रीमती गोपी पद्मा, हैदराबाद, आ.प्र. ६. श्री कपिल सोनी, पाली, राज. ७. श्रीमती इन्द्रा वत्स, दिल्ली ८. श्रीमती यशोदा रानी सक्सेना, कोटा, राज. ९. श्री भास्कर सेन गुप्ता, बैंगलूर, कर्ना. १०. स्वस्तिकाम: चैरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महा. ११. श्री मांगीलाल गोयल, अजमेर १२. श्री जयदेव अवस्थी, जोधपुर, राज. १३. श्री अनन्त, अजमेर १४. श्री दयानन्द वर्मा, गुलाबपुरा, राज. १५. सुश्री आचार्या सन्तोष, अजमेर १६. श्री राजेश गोयल, धुरी, पंजाब १७. श्रीमती मेहता माता, अजमेर १८. श्री विजयकुमार, सहारनपुर, उ.प्र. १९. स्वामी देवेन्द्रानन्द सरस्वती, अजमेर २०. श्री जयन्त आर्य, बरसात २१. श्री ओमप्रकाश गोयल, सूरत, गुज. २२. श्रीमती क्रान्ति शर्मा, सहारनपुर, उ.प्र. २३. श्रीमती गायत्री देवी सरावगी, सिकन्द्राबाद, आ.प्र. २४. श्रीमती सृष्टि नारंग, करनाल, हरि. २५. श्री कुलदीप गुप्ता, रेहाड़ी, जम्मु २६. श्रीमती चन्द्रप्रभा सत्यपाल खन्ना, रेहाड़ी, जम्मु २७. श्री सुभाष आर्य, जम्मु २८. जैनिथ एन्टरप्राईजेज, नई दिल्ली २९. श्रीमती दीपा माता, अजमेर ३०. श्रीमती सतोज शुक्ला, जयपुर, राज. ३१. श्रीमती सूरजदेवी बजाज, अजमेर ३२. स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक, रोजड़, गुज. ३३. श्री महावीर प्रसाद, सहारनपुर, उ.प्र. ३४. श्री प्रकाश मटाई, अजमेर ३५. श्री कौशल गुप्ता, गाजियाबाद, उ.प्र.।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३० सितम्बर २०१४ तक)

१. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर २. श्री विरदीचन्द गुप्ता, जयपुर, राज. ३. श्री शान्तिस्वरूप टिक्कीवाल, जयपुर, राज. ४. श्री विजयसिंह गहलोत, अजमेर ५. कै. चन्द्रप्रकाश कमलेश त्यागी, हरिद्वार, उ.ख. ६. श्री हेमन्त कुमार आर्य, अजमेर ७. श्री आदित्य सिंह, जयपुर, राज. ८. श्रीमती मिथलेश कुमारी, जयपुर, राज. ९. श्री ओमवीरसिंह, जयपुर, राज. १०. श्री राजदीप राय, अजमेर ११. श्री जयदेव उर्मिला अवस्थी, जोधपुर, राज. १२. श्री दयानन्द वर्मा, गुलाबपुरा, राज. १३. श्री तुलसीराम सिंह, हैदराबाद, आ.प्र.

शेष भाग पृष्ठ संख्या ४० पर.....

पृष्ठ संख्या ३२ का शेष भाग.....

स्तर के शिविरों का आयोजन किया जायेगा, जिनमें क्रमश: उत्तरोत्तर सूक्ष्मता के साथ विषयों का प्रतिपादन किया जायेगा। इस योजना के अन्तर्गत प्राथमिक स्तर के दो शिविर जून २०१३ व अक्टूबर २०१३ तथा द्वितीय स्तर का एक शिविर जून २०१४ में सफलतापूर्वक आयोजित किए जा चुके हैं।

इसी क्रम में प्रथम व द्वितीय स्तर का संयुक्त शिविर १२ से १९ अक्टूबर २०१४ के मध्य आयोजित किया गया, जिसमें राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, जम्मू व कश्मीर, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, बिहार, झारखण्ड, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, ओड़िशा, नेपाल आदि से पधारे लगभग १५५ साधक-साधिकाओं ने भाग लिया। शिविरार्थियों को डॉ. धर्मवीर जी, स्वामी विष्वङ् जी, आचार्य सोमदेव जी आदि से योगदर्शन, सांख्यदर्शन, मन की एकाग्रता, आन्तरिक साधना, आत्मनिरीक्षण, जिज्ञासा-समाधान आदि पर मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। उपरोक्त विषयों की दोनों स्तरों के शिविरार्थियों के लिए पृथक्-पृथक् कक्षाएँ होती रही। प्रात: सायं दोनों समय एक-एक घण्टा ध्यान-उपासना का क्रियात्मक अभ्यास कराया गया। आचार्य कर्मवीर जी के द्वारा विभिन्न आसनों, श्वसन क्रियाओं आदि का प्रशिक्षण भी प्रदान किया गया। इति।।

कुछ तड़प–कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

सागर पार ऋषि दयानन्द के दर्शन की गूञ्जः– पं. गुरुदत्त जी, पं. लेखराम जी से लेकर आचार्य रामदेव जी, मेहता जैमिनि जी और फिर पं. धर्मदेव जी तक हमारे विद्वान् बड़ी पैनी दृष्टि से विश्व में दार्शनिक व धार्मिक लहरों का अध्ययन करके वैदिक विचारधारा की छाप लगाने का कोई अवसर नहीं छोड़ते थे। अब वह अग्नि सर्वथा तो बुझी नहीं परन्तु मन्द हो गई है। आज से कुछ वर्ष पूर्व हैदराबाद से छपने वाले 'सनातन धर्म पताका' नाम के पत्र में बहुत आपत्तिजनक भाषा में महर्षि दयानन्द की समाज व्यवस्था के खण्डन करते हुए 'गुण, कर्म व स्वभाव' से वर्ण व्यवस्था की खिल्ली उड़ाई गई थी। ऋषि–भूमि गुजरात की निन्दा के लिए पुराणों की एक कहानी भी उस लेख में थी। तब मैंने उस लेख का उत्तर देते हुए लेखक को गुजरात प्रदेश में शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी थी। विषय होगा ऋषि दयानन्द की गुण, कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था या सनातन धर्म की दुर्गुणों, दुष्कर्मों के आधार पर समाज व्यवस्था श्रेष्ठ है?

उस लेख और चुनौती पर लेखक ने चुप्पी जब साध ली तो हैदराबाद में पता करने पर भी उसका पता न लग सका। रूस के समाजशास्त्री यैस्की ने एक ग्रन्थ लिखा है 'A New model of universe.' इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने लिखा है, "**मनु की वर्णाश्रम व्यवस्था मनुष्य समाज का श्रेष्ठतम संगठन है। गुण–कर्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था से उत्तम और कोई व्यवस्था मानव समाज के लिए नहीं सोची जा सकती। यह वर्ण व्यवस्था साम्यवाद तथा पूँजीवाद दोनों के दोषों से रहित है परन्तु गुण इसमें दोनों के ही समाविष्ट हैं। जब तक मनु की वर्णाश्रम व्यवस्था समाज में फिर से स्थापित नहीं हो जाती तब तक मनुष्य जाति का पूर्ण उत्थान नहीं हो सकता।**"

ऋषि मुनियों की सन्तान, राम–कृष्ण के नाम ले वा इस रूसी विचारक के इन शब्दों को पढ़कर महर्षि दयानन्द के उपकारों का ऋण समझकर क्या ऋषि को नमन करेंगे? विश्व हिन्दू परिषद् क्या इसे ऋषि दयानन्द की दिग्विजय मानेगी? ऋषि दयानन्द की शिष्य परम्परा ने गुण, कर्म, स्वभाव से वर्ण व्यवस्था विषय पर सैंकड़ों लिखित व मौखिक शास्त्रार्थ किये। अनेक आर्यों का इसी कारण सामाजिक बहिष्कार पौराणिकों ने किया। आर्यसमाज के इतिहास में ऐसा सबसे प्रचण्ड बहिष्कार मेरे जन्म स्थान के आर्यों का किया गया। यह सात खण्डों में छपे आर्यसमाज में गौरवपूर्ण घटना दी गई है। रोपड़ (पंजाब) में वीर सोमनाथ की माता ने इस आर्य मान्यता के लिए सबसे पहला बलिदान दिया था। पं. मनसाराम को बचाते–बचाते भिवानी में हमारे पूज्य महाशय हंसराज जी आर्य बरेटा को लहूलुहान कर दिया गया। उनकी हड्डी–पसली तोड़ने वालों ने इस दुष्कर्म को, पाप को अपनी उपलब्धि जाना व माना।

मनु महाराज की ऋषि दयानन्द की वेदोक्त समाज व्यवस्था को गोरी चमड़ी वाला विदेशी विचारक गुणगान ही नहीं करता वह इसे श्रेष्ठतम व्यवस्था मानता है। सनातन धर्म के तिलकधारी भाई यदि इस दिग्विजय को ऋषि का उपकार नहीं मानते तो फिर यह प्रमाण दें कि पौराणिकों कि अठारहवीं, उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी में किस शंकराचार्य या काशी के पण्डित के ग्रन्थ में गुण कर्म से समाज व्यवस्था को वेदोक्त व श्रेष्ठ सिद्ध किया गया है और हम से प्रमाण मांगा जावे तो हम कहेंगे कि सत्यार्थप्रकाश आदि ऋषि कृत ग्रन्थों के पश्चात् सन् १८९१ में छपी महात्मा मुंशीराम कृत 'वर्ण व्यवस्था' उर्दू पुस्तक से लेकर 'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर' स्वामी दर्शनानन्द साहित्य में इस सिद्धान्त की पुष्टि में सैंकड़ों नहीं सहस्रों पृष्ठ हम दिखा सकते हैं। मित्रो! यह मानो या न मानो– यह ऋषि दयानन्द के दुलारे प्यारे हमारे साहित्य पिता पूज्य पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय के बेजोड़ ग्रन्थ फिलोसॉफि ऑफ दयानन्द की गूञ्ज है जो रूस में–यूरोप में सुनाई देने लगी है। इस ग्रन्थ में अनूठी शैली से मनुस्मृति के मौलिक भाष्यकार गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने 'वर्ण–व्यवस्था' की वैज्ञानिक वेदोक्त व्याख्या की है। रूसी विचारक के कथन को पढ़कर अनायास हमारे अधरों पर तिलोकचन्द जी 'महरूम' की ये पंक्तियाँ उतर आईं:–

क्योंकर हमें भी अपने नसीबों पे नाज़ हो,
हमको नसीब हुआ तिरा ज़माने पैयम्बरी।

अर्थात् अये ऋषि दयानन्द! हमें अपने सौभाग्य पर अभिमान क्यों न करें? हमारा जन्म उस युग में हुआ जब तू वेद–सन्देश ले कर अन्धकार का संहार करने कार्यक्षेत्र में उतर आया।

'मैया तेरी कोख सुहागिन'

भारत के नये प्रधानमन्त्री की निर्वाचन में प्रचण्ड विजय का समाचार सुनते ही देशवासियों के संग मेरा मन मोर भी भाव विभोर होकर नाचने लगा। उल्लसित मन में मैं कल्पनालोक में गुजरात की एक वयोवृद्ध माता हीराबाई जी के सामने जा खड़ा हुआ। पूज्या माँ के चरण स्पर्श करते हुए मैंने भाव भरित हृदय से बार-बार कहा- **'मैया तेरी कोख सुहागिन'**

यह पंक्ति कविर्मनीषी आचार्य चमूपति जी के एक गीत की है। मुझे अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए इससे बढ़िया शब्द खोज पाना असम्भव है। श्री लाल बहादुर शास्त्री जी के निधन पर एक साहसी कांग्रेसी ने 'धर्मयुग' में लिखा था, नेहरू जी के १८ वर्ष आत्म-विश्वास खोने का काल रहा और शास्त्री जी के १८ मास का शासन काल आत्मविश्वास की प्राप्ति का काल रहा।

मोदी युग भी इसी प्रकार से ऐतिहासिक सिद्ध हो- यह जन-जन की कामना है। यह प्रचण्ड विजय किसी दल की या किसी संस्था की नीति-रीति की विजय नहीं। भाजपा तथा संघ को इस भ्रम से छुटकारा पाना होगा। यह दूरदर्शी, अथक नेता और परम पुरुषार्थी मोदी की सूझबूझ व धुन की विजय है। हाँ, सारा देश इसका श्रेय ले सकता है परन्तु श्री अमित शाह को विशेष श्रेय देना ही पड़ता है। मोदी जी की दूरदर्शिता थी कि वह अकेला व्यक्ति कांग्रेस मुक्त भारत व तीन सौ कमल खिलाने की बार-बार चर्चा किये जा रहा था। उस के संयम पर बलिहारी- उसकी पार्टी के अति उत्साही व्यक्ति लड्डू बनवाने में लगे थे और वह साढ़े बारह बजे तक अपने निवास में अकेला बैठा रहा। वह १२.३० बजे वृद्धा माता के चरणों में आशीर्वाद लेने निकला। काश! कि ऐसा संयम बड़बोले नामधारी साधु व दर्शनी नेता भी सीख लें। चुनाव में ऐसे लोगों की असंयम भाषा पर देशवासी रक्तरोदन करते रहे। मोदी युग देश के निर्माण, कल्याण व उत्थान का युग सिद्ध हो। वंशवाद और तम तस्कर से देश को छुटकारा मिल जाये।

'आर्य भानु' मासिक का जन्म:- हुपला के वीर भीमराव पटेल आदि के बलिदान से दक्षिण में आर्यों का बलिदान यज्ञ आरम्भ हुआ था। फिर गुंजोटी के हुतात्मा वेदप्रकाश तथा शूर शिरोमणि श्याम भाई के बलिदान से पं. लेखराम के वंश ने वहाँ बलिदान की परम्परा को आगे बढ़ाया। श्री भाई जी के बलिदान के ७५ वर्ष पूरे हो गये। इस अवसर पर आर्यसमाज क्या-क्या विशेष कार्यक्रम आयोजित करेगा, इसका पता दो-तीन मास में चल जावेगा। श्री डॉ. अशोक आर्य जी ने पं. नरेन्द्र जी की पुस्तक का सार तैयार करने में बड़ा परिश्रम करके कुछ लिखा। इसमें कुछ पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं से भी आपने सहायता ली। मुझे अपना ट्रैक्ट दिखाया। परिश्रम तो निचोड़ निकालने में करना ही पड़ता है परन्तु अच्छा होता यदि वह उन पत्र-पत्रिकाओं व अन्य पुस्तकों के प्रमाणों के पते देते। थोड़ा उल्लेख होने से ज्ञान पिपासुओं की विशेष लाभ मिलता है परन्तु वह ऐसा करना भूल गए। मेरे लिए भी जाँच करने की समस्या खड़ी हो गई।

एक स्थान पर यह पढ़ा कि हैदराबाद सभा के पत्र 'आर्य भानु' को हैदराबाद से आरम्भ किया गया। मैंने चलभाष पर बाद में डॉ. अशोक जी को बताया कि लगता है कि आपने डॉ. लोखण्डे जी के ग्रन्थ से यह जानकारी ली है। यह भ्रामक व तथ्यहीन है। मैं सब काम छोड़कर इसकी जाँच में जुट गया। मूल स्रोत की हम खोज नहीं करते। कुशलदेव जी ने इस विषय में अबोहर आकर विचार-विमर्श किया। मैंने इस विषय में अपनी कई पुस्तकों में बहुत कुछ लिखा है। सार रूप से बताना चाहता हूँ कि 'आर्य भानु' का जन्म शोलापुर में हुआ था। पहला अंक अगस्त १९४३ को छपा था। मुखपृष्ठ पर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का चित्र छापा गया। लोखण्डे जी ने इसे साप्ताहिक बताया है। यह भी ठीक नहीं। यह मासिक था और तिलक चौक में 'आर्य प्रेस' में इसका मुद्रण होता था। मुझे याद है कि मैंने सन् १९४८ में पूज्य पं. त्रिलोकचन्द्र जी के घर इसका एक अंक देखा था परन्तु वह उर्दू में था। कुछ धुंधली सी स्मृति है कि तब भी यह शोलापुर से ही निकलता था।

'आर्य भानु' हिन्दी के कई उद्धरण व प्रमाण मेरी पुस्तकों में दिये गये हैं। बिना मिलान और बिना जाँच पड़ताल के कुछ भी लिख देने का संक्रामक रोग आर्यसमाज में फैल चुका है। मैं भी कुछ कर नहीं सकता। यत्न करूँगा कि ऋषि मेला पर दक्षिण के बलिदानों व पत्रों पर एक खोजपूर्ण व्याख्यान दूँ। जिस कार्य में लगा हूँ उससे मेरा ध्यान न हटे, मैं यही चाहता हूँ।

आर्यसमाजियों का एक महादोष:- आर्यसमाज को महर्षि दयानन्द से एक अनूठी सम्पदा प्राप्त हुई है। ऋषि ने सत्यासत्य के निर्णय की कसौटी दे दी। जो वेदानुकूल और वेद-अविरुद्ध है सो धर्म है। जो कुछ वेद विरुद्ध है

वह अधर्म है। असत्य है। इस कसौटी पर हर विचार को कसकर आर्यसमाज वैदिक विचारधारा के प्रचार-प्रसार में आगे बढ़ता गया। कोई भी इसके सामने टिक न सका परन्तु स्वर्गीय सन्तराम जी अजमानी ने एक बार अपने एक लेख में आर्यसमाजियों की एक दुर्बलता-एक महादोष पर भी बहुत चिन्ता व्यक्त की। आर्यसमाज के लोग अब आँखें खोलकर नहीं चलते। किसी व्यक्ति व संस्था की एक दो अच्छी या लुभावनी बातों में आकर उसका अन्धानुकरण करके ऋषि मिशन को हानि पहुँचाते हैं। इतिहास इसके पचासों उदाहरण देता है। कांग्रेस, हिन्दू सभा, जन संघ, वेश पन्थ आदि की पूरी जाँच परख किये बिना अन्धे होकर चल पड़ने से आर्यसमाज की जो क्षति हुई है, वह इतिहास जानता है।

सौभाग्य से देश को एक साहसी, कर्मठ और ऊहावान् नेता अब मिला है। अब भविष्य बतायेगा कि श्री नरेन्द्र मोदी क्या करके दिखाता है? आर्यसमाजियों को सावधान होकर अपने मिशन की समर्पण भाव से सेवा करनी चाहिये। देश में जड़ पूजा, कबर पूजा, मूर्त्तिपूजा, तिलक, कण्ठी माला, नदी, पेड़, पर्वत की पूजा की आन्धी अब चलने वाली है। देश सेवा तो जी जान से करिये परन्तु नदी, नालों, पेड़ों की पूजा देश भक्ति नहीं, अन्धविश्वास है। अवतारवाद के प्रचार की आन्धी अब उठने वाली है। योग विद्या की चर्चा लेखों में रह जावेगी कबर पूजा और गंगा की आरती को राष्ट्रभक्त बनाने वाले जनता को भ्रमित करेंगे। बुद्धिमानों के लिए यह संकेत पर्याप्त है। संस्थाओं के बोझ तले दबा आर्यसमाज पहले ही बिकाऊ माल समझा जाता है। ऋषि ने घर-बार छोड़ा तो ईश्वर को जानने के लिए। वेद-प्रचार से उनका संन्यास सार्थक हुआ। आर्यो! स्वामी नित्यानन्द, श्रद्धानन्द, वेदानन्द, आत्मानन्द से द्रोह न करना। उनसे ऊर्जा प्राप्त करो।

प्रश्न अच्छा है-उत्तर पर विचारिये:- दिल्ली से एक सज्जन का प्रश्न मिला है। आपने दिल्ली से निकलने वाले ब्रह्मार्पण पत्र के ज्येष्ठ मास के अंक में लाला लाजपतराय जी के साहित्य पर भारतीय जी के लेख की दो-चार बातों की ओर ध्यान दिलाते हुए पूछा है कि लाला लाजपतराय ने अपनी आत्म कथा क्या माण्डले के दुर्ग में लिखी थी? प्रश्नकर्ता का कथन है कि श्री अलगूराय जी लिखित लाला जी की जीवनी तथा मेरी पुस्तक तो इस कथन का प्रतिवाद करती हैं। सत्य क्या है सप्रमाण बतायें। मेरा निवेदन है कि मैं इतिहास का विद्यार्थी हूँ। मैं सूची पण्डित तो नहीं हूँ। लाला जी सन् १९०७ में माण्डले में बन्दी थे। लाला जी ने अपनी आत्म कथा १९१५ में लिखी। सत्य क्या है यह लाला जी की आत्म कथा के प्रथम हिन्दी संस्करण की प्रस्तावना पढ़कर देख लें। लाला जी लिखते हैं, १९१० ई. से १९१४ ई. तक मैंने कई बार विचार किया कि अपने जीवन की घटनायें लिखूँ मगर इसी विचार से रुका रहा कि कहीं मेरा लेख मेरी कौम के दुश्मनों के हाथ में न पड़ जाय।''[१]

भारतीय जी ने लिखा है कि लाला जी लिखित मैज़िनी तथा गैरीबाल्डी की जीवनियों पर अंग्रेजों ने प्रतिबन्ध लगा दिया। प्रश्नकर्ता ने श्री अलगूराय जी तथा मेरी पुस्तक के प्रमाण देकर ही इस कथन पर कुछ स्पष्टिकरण देने को कहा है। महोदय! मैंने अंग्रेजी राज में छपे इन पुस्तकों के एक से अधिक संस्करण देखे हैं। लाला जी के साथी क्रान्तिकारी आनन्दकिशोर लिखित लाला जी के जीवन काल में छपा लाला जी का पहला जीवन चरित्र पढ़िये। सत्य सामने आ जावेगा। इन पुस्तकों को ज़ब्त करने की कहानी किसने गढ़ी- यह पता लगना चाहिये।

लाला जी लिखित ऋषि जीवन की समीक्षा आर्यसमाज के सबसे बड़े पत्र में उनके भक्त प्रशंसक सन्तराम बी.ए. जी ने की थी। लाला जी महान् देशभक्त बलिदानी थे परन्तु यह पुस्तक दोषयुक्त, अप्रमाणिक व हानिकारक है। समीक्षा फिर कभी करूँगा। 'आर्यसमाज का इतिहास' ग्रन्थ कैसा है इसकी न्यूनतायें स्वयं लाला जी की समझ में आ गईं। आप भी पढ़कर बतायें इसमें स्वामी आत्मानन्द, नित्यानन्द, पं. लेखराम, वीर तुलसीराम, स्वामी दर्शनानन्द, आर्यमुनि जी के नाम व काम की कहीं गन्ध है? नेहरू जी की डिस्कवरी ऑफ इण्डिया के गीत गाने वाले व्यक्ति से आप ऋषि मिशन से न्याय करने की आशा मत रखिये।

प्राचार्य भगवानदास का पुण्य स्मरण:- प्रिं. भगवानदास जी के दोनों बड़े पुत्र तथा यह सेवक सन् १९६४ में महात्मा आनन्द स्वामी जी के एक बड़े ऑपरेशन के समय उनका पता करने हैदराबाद गये। भगवानदास जी उन दिनों हृदय रोग के आक्रमण के कारण यात्रा नहीं कर सकते थे। जब हम वहाँ से लौटने लगे तो महात्मा जी ने मुझे आज्ञा दी कि प्रिं. भगवानदास जी का जीवन समाज के लिए बहुत मूल्यवान् है। अब आपने इस बात का ध्यान रखना है कि वह स्वास्थ्य का ध्यान रखकर कॉलेज के काम करें।

प्रिंसिपल जी के एक भक्त से पता चला कि डी.ए.वी.

वाले तो उनकी चर्चा करने से भी बिदकते व डरते हैं। कांगड़ा कॉलेज के वह संस्थापक प्राचार्य थे परन्तु..... मैंने उस भाई से कहा, बुरा मत मनायें। शिक्षा संस्थायें तो व्यापार मण्डल है। यह कोई मिशन नहीं। इनके कल्पित इतिहास हदीस, पुराण कथायें सब गढ़न्त हैं। इतिहास तो संघर्ष करने वालों व बलिदानियों का होता है। जो अपनी शताब्दी पर शोभा यात्रा न निकाल सके। भाग खड़े हुए। उनका क्या इतिहास है? भगवानदास डी.ए.वी. का एकमेव प्रिंसिपल है जो धर्मरक्षक बनकर जेल गया। मराठी दैनिक सकाल की फाईलें देखिये। भगवानदास लाहौर से आकर अमृतसर नेहरू जी से मिले। लाहौर में डी.ए.वी. कॉलेज में हिन्दू सिख शरणार्थियों को सुरक्षित भारत लाने की व्यवस्था करवाई। यहाँ से वह तीन बार इसी कार्य के लिए लाहौर गये। यह कहानी लम्बी है। गौरवपूर्ण है।

मैंने डी.ए.वी. के एक पूर्व प्रधान मास्टर नन्दलाल जी के पुत्र धर्मपाल का कोलकाता से लिखा एक लम्बा पत्र पढ़ा है। आपने अपने सहपाठी भगवानदास जी को लिखा, आप दक्षिण में आर्यसमाज की जो सेवा कर रहे हैं आप इसी कारण अमर रहेंगे। यह डी.ए.वी. के लिए जो कुछ आप कर रहे हैं इसका परिणाम कुछ नहीं निकलेगा। आर्यसमाज के इतिहास में एक नहीं पचास पुस्तकों में भगवानदास जी की स्वर्णिम सेवाओं की चर्चा मिलती है। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय वैदिक मिशन की सेवा के कारण देश-विदेश में प्रसिद्ध हैं। वे प्रिंसिपल रहे, इस कारण से वे अमर नहीं हैं।

इस आक्षेप का उत्तरः- जहाँ भी जाओ। धर्म, कर्म, पाप, पुण्य, सुख, दुःख व उपासना की चर्चा करने पर सर्वत्र एक प्रश्न पूछा जाता है। यदि परमात्मा सर्वशक्तिमान् है तो क्या वह संसार से पाप व दुःख को निष्कासित नहीं करना चाहता? इस प्रश्न को इस प्रकार से भी किया जाता है कि परमात्मा हमें पाप करते समय क्यों नहीं रोकता-टोकता? मनुष्य पाप करता ही क्यों है? इन दिनों कई आर्य पत्रों में कुछ लेखकों ने अपनी-अपनी शैली में इस पर लिखा भी है।

मेरा मत है कि पुराने शास्त्रार्थ महारथियों के पश्चात् श्री पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने वैदिक दृष्टिकोण से इसका बहुत रोचक तथा तर्क संगत व शास्त्र सम्मत उत्तर दिया है। वे यह भी लिखते हैं कि भौतिकतावादियों व नास्तिकों से कभी भी किसी ने पाप व दुःख का कारण व निवारण जानने के लिए लिखित व मौखिक प्रश्न पूछा ही नहीं। पाप है क्या? उपाध्याय जी ने लिखा है- 'When you do a thing which you should not do, it is a sin' जो नहीं करना चाहिये। वही कर्म पाप है।

जब मनुष्य के सामने दो अथवा दो से अधिक विकल्प हों और आपकी कर्म करने की स्वतन्त्रता भी मानी जावे तभी पाप-पुण्य का प्रश्न उठता है। जब विकल्प ही दूसरा न हो, विवशता से कर्म करना पड़े तो पाप करने का प्रश्न ही नहीं उठता। पाप का फल दुःख क्यों होता है? यह भी एक हास्यास्पद प्रश्न है? तो क्या उचित-अनुचित कर्म का एक जैसा फल होना चाहिये? पं. गंगाप्रसाद जी ने लिखा है, 'All pains are remedial' अर्थात् सब दुःख उपचारी हैं। उस शिक्षा संस्था के बारे में आप क्या कहेंगे जहाँ योग्यता की परीक्षा ही न हो या सबके सब प्रकार के उत्तरों के एक जैसे अंक दिये जायें।

एक और बात को समझना होगा कि कर्म करने की स्वतन्त्रता से वञ्चित किया जाना सबसे बड़ा अभिशाप है। इससे तो जीव और जड़ में, जीवित व मृत में कुछ भी भेद नहीं रहेगा। मनोविज्ञान भी आज इस वैदिक सिद्धान्त का उपासक है। घोड़े को आप नदी पर ले जा सकते हैं परन्तु यह उसकी इच्छा है कि जल पिये अथवा न पिये।

मेरा विचार एक पुस्तक लिखने का है जिसमें बीसियों प्रमाण देकर विधर्मियों की बदली सोच का दिग्दर्शन होगा। वे अब वैदिक मान्यताओं को इस्लाम का नाम देकर स्वीकार कर रहे हैं। शैतान पाप करवाता है इस पुरानी इस्लामी मान्यता का खण्डन ऋषि के तीक्ष्ण तर्कों से किया जा रहा है। यह पढ़कर सुखद आश्चर्य होता है।

पं. प्रेमचन्द जी चल बसेः- वैदिक गर्जना के सम्पादक प्रिय डॉ. नयनकुमार जी ने दो दुःखद समाचार दिये हैं। हैदराबाद राज्य के वयोवृद्ध भजनोपदेशक, स्वतन्त्रता सेनानी पं. प्रेमचन्द जी तथा हमारे कृपालु धारूर के श्री रत्नप्रकाश चल बसे। सम्भवतः पं. प्रेमचन्द जी ने आर्योपदेशकों में सबसे अधिक समय तक धर्मप्रचार किया। श्री पं. ओम प्रकाश जी वर्मा तथा इस सेवक को उनके सबसे पुराने मित्रों के रूप में इस समय समझा जा सकता है। महाराष्ट्र में स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा श्री वेदकुमार जी वेदालङ्कार उनको जानने वाले पुराने आर्य पुरुष हैं। पं. प्रकाशचन्द्र जी हास्यविनोद से उन्हें 'इश्कचन्द्र' कहा करते थे। कभी-कभी वर्मा जी तथा मैं जब उन्हें इश्कचन्द्र कहते थे तो वह बहुत हँसते थे।

उनके साथ कई बार कई कार्यक्रमों में रहा। उनका

एक रोचक संस्मरण याद आ गया। निज़ामी काल में वह कुशलदेव जी के जन्म स्थान के पास रात्रि समय गाड़ी पकड़ने वाले थे। दो-चार आर्य उन्हें ट्रेन पर चढ़ाने आये। पं. कर्मवीर जी उदगीर भी साथ थे। ट्रेन आने में देर थी। ये सब वहाँ सो गये। पास ही कुछ रज़ाकार वहाँ निज़ाम को बैठे-बैठे कोस रहे कि यह आरयाँ लोगों (हैदराबाद में आर्यों को बहुवचन में आर्यां बोला जाता था) को दबाता नहीं। आरयाँ ने अमीन साहिब के दाँत तोड़ दिये इत्यादि कहानियाँ वे सुना रहे थे।

पं. कर्मवीर जी ने सुनकर सब आर्यों को कहा, चलो-चलो कहीं आरयाँ न आ जावें। तब वे बोले नहीं, ऐसा मत समझें। आप उनकी बैलगाड़ी जब निकले तो रस्ता छोड़ दो तो फिर आर्य कुछ नहीं कहते। ट्रेन आने पर जब गाड़ी चढ़ाने आये आर्यों ने पं. प्रेमचन्द जी, पं. कर्मवीर जी को नमस्ते-नमस्ते करके विदाई दी तो उनको नमस्ते-नमस्ते सुनकर पता चला कि ये आरयाँ के पण्डित हैं। उन्होंने बहुत इतिहास देखा और संघर्ष काल में पीछे नहीं हटे।

रत्नप्रकाश जी पं. बंसीधर जी के पौत्र और श्री इन्द्रमोहन जी के स्वाध्यायशील पुत्र थे। इस परिवार की सेवायें स्मरणीय हैं। रत्नप्रकाश जी की पुत्रियाँ उच्च शिक्षित हैं। मराठवाड़ा के आर्यों को उनकी पत्नी को, बेटियों को स्थापित करने में पूरा सहयोग करना चाहिये। उनके रिक्त स्थान की पूर्ति की चिन्ता भी सब मिलकर करें।

टिप्पणी

१. द्रष्टव्य लाला जी की आत्मकथा हिन्दी प्रथम संस्करण पृष्ठ २.

- वेद सदन, अबोहर-१५२११६ (पंजाब)

पृष्ठ संख्या ३५ का शेष भाग.....

१४. श्री कैलाशचन्द शर्मा, अजमेर १५. स्वामी देवेन्द्रानन्द सरस्वती, अजमेर १६. श्री प्रमोद शर्मा, भरतपुर, राज. १७. श्रीमती क्रान्ति शर्मा, सहारनपुर, उ.प्र. १८. श्रीमती चंचल शर्मा, अजमेर १९. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर २०. श्री आनन्द सोनी, अजमेर २१. श्री राजेश त्यागी, अजमेर २२. श्री ध्रुव नारंग, करनाल, हरि. २३. श्री सुभाष आर्य, जम्मु २४. श्रीमती शान्ति देवी, रोहतक, हरि. २५. श्री देवेन्द्र कुमार, रेवाड़ी, हरि. २६. श्री सत्यदेव सिंह, मुजफ्फरनगर, उ.प्र. २७. श्री नाथूराम अग्रवाल, जयपुर, राज. २८. श्री जगराम आर्य, नारनौल, हरि. २९. श्रीमती रमा आर्या, महेन्द्रगढ़, हरि.।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पुस्तक परिचय

पुस्तक का नाम- ईश्वर-आँखों के सामने
लेखक - पवमान आलोक
प्रकाशक - आचार्या सुशीला साहित्य संस्थान, पो. गुरुकुल दाधिया, जि. अलवर, राज.-३०१४०१
पृष्ठ संख्या - ५९, **मूल्य** - ६०=००

ईश्वर है या नहीं इस प्रकार के नाना प्रश्न आज के इस भौतिक वाद के युग में बनते जा रहे हैं। ईश्वर को किसने देखा? ईश्वर जन्म लेता है या नहीं? ईश्वर अवतार लेता है या नहीं? आदि-आदि।

ईश्वर की सत्ता को कोई स्वीकार नहीं करता। जबकि मानव, जीव जन्तु, पशु, पक्षी, सागर, उपवन, विविध फल, फूल, अन्न, कन्द, मेंवे, आदि किसने बनाया? यह ईश्वर की अनुपम कृपा का ही प्रतिफल है कि हमारी अनन्त आवश्यकताओं की पूर्ति उसके द्वारा हो रही है यह प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप में हमारे सामने घटित है।

दिन-रात, मास-वर्ष, युग आदि का निर्माण कर्त्ता वह ईश्वर ही है। सृष्टि का निर्माण, मानव का निर्माण- उसकी असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति का होना, जन्म-मृत्यु की प्रक्रिया आदि प्रकट करते हैं कि ईश्वर है। वेदों में इस बात का प्रमाण है। ईश्वर आँखों के सामने है यही चिन्तन का विषय है। लेखक के मन में खेद है कि ईश्वर को लोग क्यों नहीं मानते इन्हीं विचारों की अभिव्यक्ति के साथ फल एवं वृक्ष, पृथ्वी का व्यास, पहला शब्द, शुद्धिकरण, जीवकोश द्वारा विचार कर आस्था की भावना स्वतः प्रकट होगी। वेद एवं वेदानुकूल ग्रन्थों में ईश्वर के स्वरूप को समझाने का प्रयास लेखक ने किया है। अन्धविश्वास, नास्तिकता को छोड़कर, नाना पन्थों व अवतारों से विमुख होकर ईश्वर को समझे जिसका निज नाम ओ३म् है।

लेखक की सार्थकता तभी है जब आप ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करें। उसके बिना कुछ भी प्राप्य नहीं । सम्पूर्ण अध्ययन से आपके हृदय के द्वार खुलेंगे और परम पिता (ईश्वर) के विश्वासी हो सकेंगे। लेखक का इस प्रयास हेतु साधुवाद। लघु पुस्तक के प्रचार-प्रसार में योगदान दें। यह पुस्तक भटकते हुए युवाओं के लिए मार्ग प्रशस्त का साधन है। कवि के शब्दों में -

'तेरी सत्ता के बिना पत्ता तक हिलता नहीं' खिले ना कोई फूल।

- देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

नियमः

- सुरेशचन्द्र शास्त्री

प्रथमो नियमः- विद्या सबहि सत्य बतलाये।
सकलहिं पदारथ ज्ञान कराये।।
आदि मूल प्रभु तुम्हहिं कहावा।
प्रथम नियमहिं लिख ऋषि बतावा।।

द्वितीयो नियमः-सच्चिदानन्द प्रभु रूप तुम्हारा।
निराकार कथहिं वेद उचारा।।
न्यायकारि तुम सर्वशक्तिमाना।
दयालु अजन्मा कृपा निधाना।।
अनन्त अनादि ईश निर्विकारा।
अनुपम नाथ सबहि आधारा।।
सर्वेश्वर तुम सर्वव्यापक स्वामी।
प्रभु अजर अमर सर्वान्तर्यामी।।
अभय नित्य पवित्र प्रभु मैं जाना।
सृष्टि रचयिता ईश पहिचाना।।
पिता करहिं हम भगति तुम्हारी।
ज्ञान कराये वेद महवारी।।

तृतीयो नियमः- वेद सुधा सद्ज्ञान भण्डारा।
पढ़हिं पढ़ावहिं अर्थ विचारा।।
सुनै सुनावै जो चित लाईं।
परम धरम ऋषि लिख बतलाई।।

चतुर्थो नियमः- सत्य ग्रहण करहिं सब लोगा।
मिथ्या तज अपनावै योगा।।

पञ्चमो नियमः- करहिं करम सब धर आधारा।
सत्य असत्य जन करहुँ विचारा।।

षष्ठो नियमः- शरीर आत्मा और समाजा।
उन्नति करहिं सफल होय काजा।।
आर्यसमाज यही उद्देशा।
परोपकार कर हरहुँ क्लेशा।।

सप्तमो नियमः- प्रीति करहिं सब धर्मानुसारा।
यथा योग्य बरतहि व्यवहारा।।

अष्टमो नियमः- यत्न करहिं विद्या बढ़ा जाई।
सकल अविद्या नाश कराई।।

नवमो नियमः- निज उन्नति लख मन हरषाई।
केवल यही धरम नहीं भाई।।
उन्नति जन-जन करहिं विशेषा।
कर निज मन माहिं अति सन्तोषा।।

दशमो नियमः- नियम सामाजिक सर्वहितकारी।
करहुँ आचरन तदनुसारी।।
निज हितकर जो नियम बनाये।
रहें स्वतन्त्र ऋषि बतलाये।

दोहा- नियम लिखे ऋषिवर यहाँ, सुधरै सकल समाज।
'सुरेश' जगाया विश्व को दयानन्द महाराज।।

- **आर्यसमाज महू, इन्दौर, म.प्र.**
दूरभाष- ०९१६५०३८३५६

जो नित्य पदार्थों में नित्य और स्थिरों में भी स्थिर परमेश्वर है, उस समस्त जगत् के उत्पन्न करने वाले परमेश्वर की प्राप्ति और योगाभ्यास के अनुष्ठान से ही ठीक-ठीक ज्ञान हो सकता है, अन्यथा नहीं।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२५

जैसे सकल ऐश्वर्य का देने वाला जगदीश्वर है वैसे सभाध्यक्षादि मनुष्यों को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.३०

गुरुजनों की शिक्षा से सब को सुख बढ़ता है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ६.२९

आर्यजगत् के समाचार

१. वार्षिकोत्सव- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय होशंगाबाद, म.प्र. का १०३वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक ५ से ७ दिसम्बर २०१४ को आयोजित किया जा रहा है। इस उत्सव में देश के ख्यात नाम विद्वानों द्वारा विविध विषयों पर उपदेश व प्रवचन होंगे तथा अध्ययनरत ब्रह्मचारी छात्रों के पाणि तथा वाणी के मनोहर कार्यक्रम देखने को मिलेंगे। आप समस्त गुरुकुल प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि उक्त कार्यक्रम में पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ायें व विद्वानों के प्रवचनों का लाभ लें।

२. वेद प्रचार- परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा दिनांक १८ सितम्बर से २ अक्टूबर २०१४ तक वेद प्रचार का कार्यक्रम परतवाड़ा, जि. अमरावती, महाराष्ट्र में रखा गया, जिसमें प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्रसिंह आर्य एवं श्री लेखराज शर्मा को भेजा गया। उनके सुन्दर भजन एवं प्रवचन लोगों को बहुत ही अच्छे लगे। लोगों का मन विभोर कर दिया। लोगों ने परोपकारिणी सभा की प्रशंसा की। कार्यक्रम के सहयोगी श्री मोहनराय बोचरे, श्रीमती शीला बोचरे, श्री पंकज कुमार शाह, श्री रामेश्वर शास्त्री बारखड़े, श्री तुलसीराम, पथरोठ के निवासी श्री शरद कोसरे, श्री नयन टावरी अकोला आदि थे।

३. सी.डी. का लोकार्पण- लेफ्टिनेंट जनरल श्री ए.एस. रावत (सी.एम.एम., जबलपुर) द्वारा नगर की प्रतिभाशाली गायिका, आकाशवाणी कलाकार एवं आर्यसमाज के विभिन्न कार्यक्रमों में भजनों के माध्यम से सहयोग देने वाली स्वर साधिका इंजी. कु. विदुषी सोनी की सी.डी. 'परमपिता तो एक है' भजन संग्रह का लोकार्पण गत दिवस आर्यसमाज नेपियर टाउन, जबलपुर में सम्पन्न हुआ।

४. पुरस्कार घोषित- गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति की ओर से इस वर्ष वैदिक साहित्य पर दिया जाने वाला २१०००/- का पुरस्कार वेद विदुषी आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा, पाणिनि कन्या महाविद्यालय वाराणसी को उनकी महत्त्वपूर्ण कृति 'ब्रह्मवेद है अथर्ववेद' पर प्रयाग में आयोजित एक भव्य समारोह में प्रदान किया जायेगा।

५. बलिदान समारोह मनाया- आर्यसमाज महर्षि दयानन्द बाजार (दाल बाजार) लुधियाना में वेद प्रचार सप्ताह १५ से २१ सितम्बर २०१४ को मनाया। इसके अन्तर्गत चतुर्वेद शतकम् यज्ञ का आयोजन किया गया एवं अमर शहीद तेजपाल शाथी का २६वाँ बलिदान दिवस व ११ कुण्डीय यज्ञ के साथ चतुर्वेद शतकम् पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा कर्मवीर शास्त्री व मुख्य वक्ता स्वामी यज्ञमुनि जी रहे।

६. यज्ञ सम्पन्न- गोविन्दपुरी, रामनगर, सोडाला, जयपुर, राजस्थान में तीन दिवसीय अथर्ववेद ब्रह्म पारायण यज्ञ २८ सितम्बर २०१४ को सम्पन्न हुआ। डॉ. रामपाल विद्याभास्कर के ब्रह्मत्व में वेदपाठ पं. भगवान सहाय विद्यावाचस्पति, डॉ. सन्दीपन आर्य एवं श्रीमती श्रुति शास्त्री द्वारा हुआ। प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री टीकमसिंह आर्य थे। डॉ. कृष्णपालसिंह के अथक प्रयासों से यह गोविन्दपुरी में चौथा पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ।

७. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज जगाधरी वर्कशाप का वार्षिकोत्सव धूमधाम से ३ से ५ अक्टूबर २०१४ तक मनाया गया जिसमें आर्यजगत् के यशस्वी विद्वान् तथा परोपकारिणी सभा, अजमेर के कार्यकारी प्रधान डॉ. धर्मवीर व प्रसिद्ध भजनोपदेशक पं. सत्यपाल सरल पधारे। शंका समाधान के अतिरिक्त डॉ. धर्मवीर जी ने ईश्वर की निराकारता, महान् पुरुष बनने के सूत्र, यज्ञोपवीत का उद्देश्य तथा ईश्वर की उपासना आदि विषयों पर विस्तृत एवं प्रामाणिक प्रकाश डाला जबकि पं. सत्यपाल सरल व पं. इन्द्रजित् देव ने ईशोपासना, स्वतन्त्रता आन्दोलन में आर्यसमाज का योगदान, असत्य का खण्डन व इसके लाभादि विषयों पर श्रोताओं का मार्गदर्शन किया।

८. वेदकथा सम्पन्न- आर्यसमाज मानटाउन एवं महिला आर्यसमाज सवाई माधोपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में आर्यसमाज मन्दिर में २३ से २८ सितम्बर २०१४ तक सामवेद पारायण यज्ञ, भजन उपदेश एवं संगीतमय वेदकथा का आयोजन किया गया, इस कार्यक्रम की मुख्य वक्ता एवं कथावाचक ब्रह्मचारिणी बहिन सविता आर्या, मथुरा रही एवं बहिन स्मृति आर्या, दिल्ली एवं प्रतिभा आर्या ने सस्वर मधुर मन्त्रोच्चारण करते हुए सामवेद पारायण सम्पन्न कराया।

९. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज नींदड़, जयपुर, राज. का ४७वाँ वार्षिकोत्सव ३ से ५ अक्टूबर तक पाँच सत्रों में सम्पन्न हुआ। प्रत्येक सत्र में यज्ञ-भजन एवं विद्वानों के प्रवचन हुए। डॉ. रामपाल विद्या भास्कर के ब्रह्मत्व में वेदपाठ डॉ. सन्दीपन आर्य व श्रुति शास्त्री ने किया। इस अवसर पर सुमधुर भजन बिजनौर के प्रसिद्ध भजनोपदेशक टीकमसिंह आर्य एवं स्थानीय सर्व श्री जवाहरलाल वधवा तथा मेहरा दम्पत्ति के हुए।

योग-साधना शिविर (प्रथम व द्वितीय स्तर) १२ से १९ अक्टूबर २०१४

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक

प्रेषण : ३० अक्टूबर, २०१४

३९५९/५९

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

डाक टिकिट